# अवधूत गीता ज्ञान दर्शन

परमगुरु श्री स्वामी
अचलरामजी महाराज
एवं शिष्य
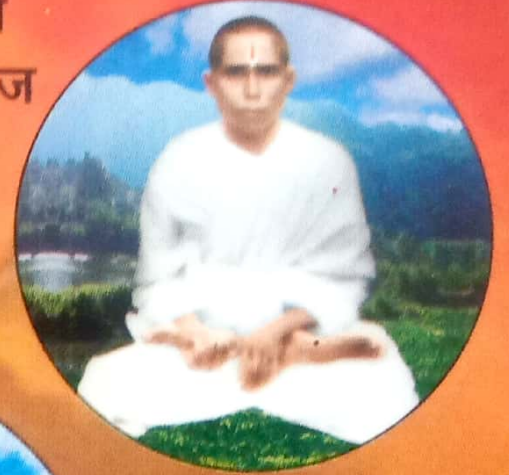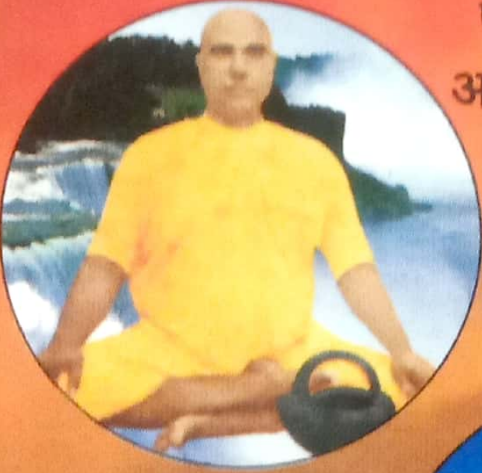
श्री स्वामी फूलरामजी
महाराज
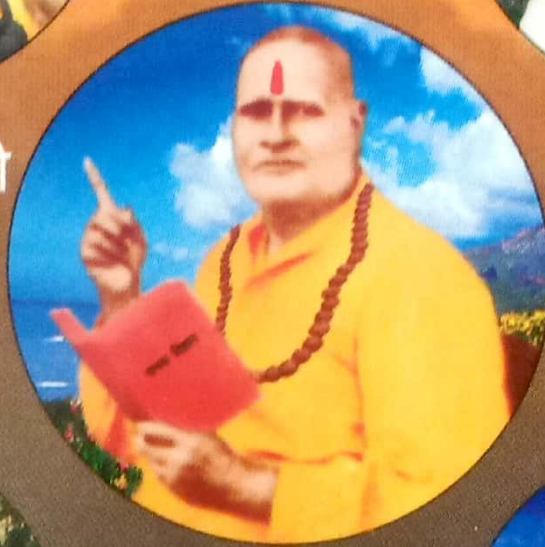
श्री स्वामी उत्तमरामजी
महाराज
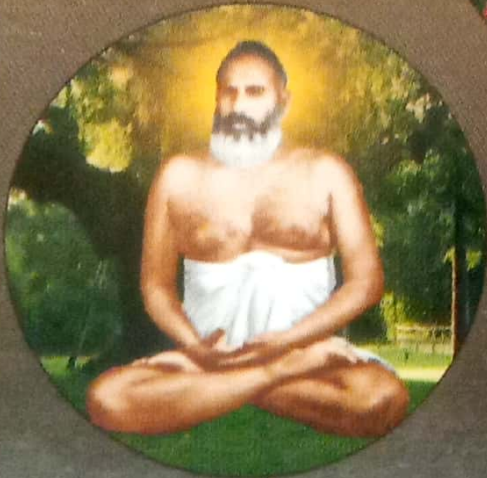
सद्गुरुदेव
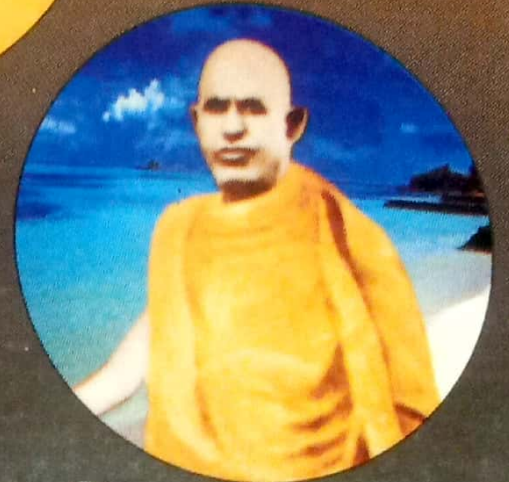
श्री स्वामी अचलनारायणजी
महाराज

श्री स्वामी दयारामजी
महाराज

# श्री वैष्णव आचार्य पीठ के परमाचार्य दर्शन

ज. गु. श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी

पूर्वाद्य ज.गु. श्रीरामजी

ज. गु. श्री स्वामी अग्रदासजी महाराज

श्री स्वामी संतदासजी महाराज 'वैरागी'

श्री स्वामी हरिरामजी महाराज 'वैरागी'

श्री स्वामी जीयारामजी महाराज 'वैरागी'

श्री स्वामी सुखरामजी महाराज 'वैरागी'
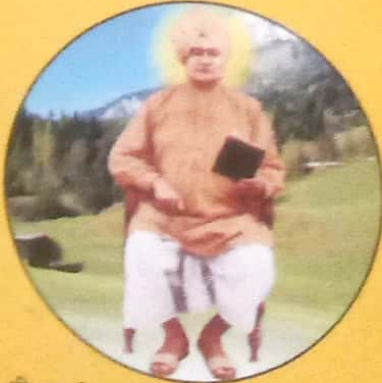
श्री स्वामी अचलरामजी महाराज 'वैरागी'

श्री रामप्रकाशाचार्यजी 'अच्युत'
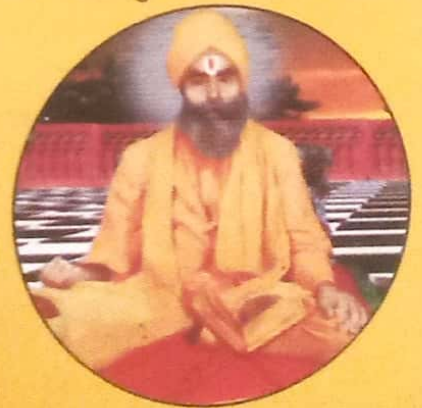
श्री स्वामी उत्तमरामजी महाराज 'वैरागी'

ॐ

# अवधूत
# गीता ज्ञान दर्शन

## सद्गुरु वाणी - आध्यात्मिक साधना

*जिसमें*
*स्वामी सुखरामजी महाराज वैरागी की कृतियाँ*
*एवं स्वामी बनानाथजी महाराज कृत परवाणा टीका सहित*
*देव गायत्री संग्रह*

*सम्पादक/टीकाकार*
**स्वामी रामप्रकाशाचार्य जी महाराज 'अच्युत'**
**उत्तम आश्रम (आचार्य पीठ)**
कागातीर्थ मार्ग, जोधपुर-342 006

साध्वी अन्नपूर्णाबाई के सहयोग से

❖ प्रकाशक :

उत्तम प्रकाशन

उत्तम आश्रम (आचार्य पीठ)

कागातीर्थ मार्ग, जोधपुर-342 006

(0291) 2547024, मोबा. 9414418155

❖ ISBN : 81-88138-37-1



❖ प्रथमावृति : सन् 2012 वि. सं. : 2069

❖ मूल्य : 30/-

❖ टाइपसेटिंग :
उत्तम कम्प्यूटर
जोधपुर

मुद्रक :
हिंगलाज ऑफसेट प्रिंटर्स
जोधपुर

# दो शब्द...

सनातन धर्म एक जीवन प्रणाली है, साधन पद्धति एवं राष्ट्रोत्थान सहित सामाजिक कार्य शैली का दर्शन धर्म रहा है। इसी कारण भारत (आर्यावृत) प्राचीन काल से विश्वगुरु रहा है, जो सन्तवाणी का मूल आधार है।

महापुरुषों की वाणी वैदिक सिद्धान्त, उपनिषद् ज्ञान, दर्शन शास्त्रों द्वारा अनुमोदित, साधना के अनुभव द्वारा अनुभूति किये रहस्य, साधक जीवन में कल्याणकारी साधना का स्रोत है। सन्त-महात्माओं के द्वारा अनुभव सदा कथन उपनिषद्-दर्शन शास्त्रों का सार गर्भित रहस्य होता है। सतगुरु-सन्तों की कृपा से जन साधारण गरीब-अमीर किसानों के मुँह से वेद-सिद्धान्त प्रणवादि महावाक्यों का उच्चारण, आराधना का सरलीकरण होता है। आद्य 'रामानन्दाचार्य' की अग्र-हरि परम्परा के सन्तों अर्थात् जोधपुर विरक्त गूदड़ गद्याचार्य स्वामी 'हरिराम जी' महाराज की पारम्परिक शिष्यजन परम प्रसिद्ध सन्तों का

अनुभव शताब्दियों से सर्व प्रसिद्ध प्रचारित मुँह बोली वाणी के रूप में सरलानुकरण से सर्वत्र प्रचारित रहा है।

सत्संग प्रेमी भक्तों की आशान्वित प्रेरणा से श्रीवैष्णव विरक्त गूदड़गद्दी के ख्यातिवान् सन्तों की कृतियों में श्री मद् दत्तात्रेय कृत 'अवधूत गीता' एवं जगद्गुरु शंकराचार्य कृत 'उपदेश पंचक' के काव्य का अनुवाद एवं परवाणा के कठिन शब्दार्थों सहित भावार्थी टीका को एक साथ प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है पाठक लाभ उठायेंगे।

उत्तम आश्रम, जोधपुर

संवत् 2069

गुरुकृपाकांक्षी

**स्वामी रामप्रकाशाचार्य**

# विषयानुक्रमणिका

ॐ

श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः

श्री वैष्णव विरक्त गूदड़ गद्दी जोधपुर के तृतीय पीठाधीश्वर

# श्री श्री 108 श्री स्वामी सुखरामजी महाराज का परिचय

सुखराम जी महाराज-जिनका जन्म रोल काजियान (नागौर) में वि. सं. 1863 वैशाख पूर्णिमा को हुआ था और वि.सं. 1959 फाल्गुन वदि 4 रविवार को साकेतवास हुआ, आपका अनुभव 'वाणी प्रकाश' नामक ग्रन्थ में वि.सं. 1964 से प्रकाशित है। उस में प्रकाशित 84 भजनों की ब्रह्म विषयणी भावार्थी टीका 'सुखराम दर्पण' नामक ग्रन्थ में आपकी साकेत शताब्दी वि.सं. 2059 से प्रस्तुत प्रकाशन प्रसारित है। उन्ही के द्वारा अनुवादित छन्दों को भावार्थी टीका से प्रस्तुतीकरण किया गया है, जो प्रस्तुत है। आप के आठ शिष्यों में परम प्रसिद्ध स्वामी अचलराम जी हुए। उनके चार शिष्य क्रमशः 1. संत फूलराम जी, 2. संत उत्तमराम जी, 3. संत अचलनारायण जी, 4. संत दयाराम जी हुए।

ॐ

# आद्य श्री दत्तात्रैयावतार निर्मित अवधूत गीता

*श्रीवैष्णव विरक्त गूदड़ गद्याचार्य*

*अनन्त श्रीस्वामी जीयाराम जी महाराज के परम शिष्य*

**श्री श्री 108 श्री स्वामी सुखराम जी महाराज वैरागी**

**कृत-अनुवाद काव्य**

*(श्लोक)*

आशापाशविनिर्मुक्तो आदिमध्यान्तनिर्मलः।
आनन्दो वर्तते नित्यमकारस्तस्य लक्षणम्॥1॥

*'अ' अक्षर श्लोकानुवाद*

*(मनोहर छन्द)*

आशा रूपी पाशी सात, बन्ध्या सब जीव जात।
उत्पति थिति पात, ताहि में समात है॥
आशा पाश काटी सन्त, मुक्ति हूं कि त्यागी चिन्त।
आदि अरु मध्य अन्त, निर्मल अगात है॥

**मन बुद्धि अहं चित, परे निजानन्द नित।**
**आनन्द सोई अमित, सन्त सो लखात है॥**
**अक्षर 'अकार' सेतु, लक्षण कहीजे ऐतु।**
**'सुखराम' पर हेतु, भाषा समझात है॥1॥**

*शब्दार्थ*– **आशा**=किसी पदार्थ के मिलने की इच्छा या कामना। **सात पाँशी**=अल्पनिश्चय, नास्तिकता, लौकेषणा, वितैषणा, सुतैषणा, वासना, परिवार। **पात**=पतन, प्रलाप, नाश। **अगात**=शरीर रहित, गायन रहित, निर्देह, सूक्ष्म देह। **अमित**=अपरिमित, असीम, बेहद, अत्यधिक, अपार, अक्षय। **अक्षर**=अविनाशी, नित्य, स्थिर, क्षरण रहित। **अकार**=हिन्दी और संस्कृत लिपि के स्वर वर्ण का प्रथम अक्षर, इस का उच्चारण कण्ठ से होता है। अवधूत शब्द का प्रथम (पहला) अक्षर 'अ' अपार, अक्षय, अलौकिक, अपौरुष, तन्त्र शास्त्रानुसार ईश्वरत्व ज्ञान। **ऐतु**=इतना, यही। **पर हेतु**=विशेष परोपकार करते हुए जीवों के कल्याणार्थ।

*भावार्थ*– मानव जीवन में वासना मयी आशा की सात प्रकार से फाँसी लगी हुई रहती है। इस आशा की वासना मयी इच्छा से लख चौरासी के जीव मात्र समस्त प्राणी बन्धे हुए है।

जो उत्पन्न स्थित और लय (नाश) होने वाले हैं, वे सभी इस के अन्तर्गत हैं।

इस आशा रूप अजर फाँसी (पाँश) के बन्धन को काट कर जो त्याग-वैराग्य में साधन सहित मुक्त हुए है, मुक्ति की आशा भी जिन्होने त्याग दी है, जिन का जीवन सतगुरु शरणागत से लेकर अन्तिम श्वास तक सदैव निर्वासना सहित मुक्त रहते हैं। जिनके मन, बुद्धि, चित और अंहकार से परे नित्य प्रति सत् चित् स्वरूप स्वात्मानन्द में वृति ख्यात है। जो अपरिमित अपार आनन्द में निर्मग्न संशय रहित है। जो केवल मात्र अविनशी रूप प्रणव ओम के चिन्तन में सतत (निरन्तर) लगे हुए है। यह इतने लक्षण जिनमें है, वह सुख मय राम रूप परोपकार में (परहित निरत) रहकर आत्मवित भाषा में सभी को समझाते रहते है।

यह अवधूत ज्ञानी के प्रथम 'अ' अक्षर की व्याख्या स्वामी सुखराम जी महाराज द्वारा कथन की गई है।

*(श्लोक)*

**वासनावर्जिता येन वक्तव्यं च निरामयम्।**
**वर्तमानेषु वर्तेत वकारस्य तस्य लक्षणम्॥2॥**

## 'व' अक्षर श्लोकानुवाद

### (मनोहर छन्द)

यह लोक परलोग, वासना सहित भोग।
त्याग्या सब जाण रोग, वासना अतीत है॥
देखे सुने कहै कुछ, माया रूप जाने तुच्छ।
इन ते आतम स्वच्छ, निरामय वकीत है॥
वर्तमान वर्ते नित, तामे नाहि हित चित।
आत्म स्वरूप थित, ज्ञान सु अदीत है॥
अक्षर वकार लक्ष, यामे कोउ नही पक्ष।
कह्यो 'सुखराम' दक्ष, अवधूत गीत है॥2॥

*शब्दार्थ*– **परलोग**=परलोक, इस दृश्य-श्राव्य लोक एवं अतिरिक्त अन्य मनो मालिन्य कल्पित नाम-रूप मात्र। **अतीत**=गत, व्यतीत, पृथक, निर्लेप, विरक्त, परे। **निरामय**=निष्कलंक, शुद्ध दोष रहित, अभ्रांत, ऐबों से परे। **थित**=स्थित, निश्चय, ठहरा हुआ, स्थापित। **अदीत**=रवि, सूर्य, भास्कर, दिनकर। **वकार**= 'व' वर्ण माला का उन्तीसवां व्यञ्जन वर्ण, इसे दन्तौष्ठय कहते है। वायु, कल्याण, सान्त्वना,

बलवान, शार्दूल, मन्त्रणा, य वर्ग का चौथा वर्ण। **लक्ष**= किसी उद्देश्य से किसी वस्तु स्थिति पर दृष्टि रखना, निशाना, अनुमेय-उपमेय। **दक्ष**=निपुण, कुशल, किसी कार्य को सुगमता पूर्वक चटपट करने की शक्ति, चातुर्य्यता। **गीत**=वह वाक्य पद या छन्द जो गाया जाय, यश, बड़ाई, काव्य पाठ।

*भावार्थ*— मानव जीवन को वासना भ्रमित कर रही है, यह लोक-परलोक सारा वासना के भोग से बन्धा हुआ है। परम विरक्त ज्ञानी जन जिन्होंने इस वासना समुचित को रोग समझ कर त्याग दी है। वे लोक, धन, सुत की समस्त वासना से अतीत (परे) होकर रहते हैं। जो कुछ शब्द-श्रवण, त्वचा-स्पर्श, रूप-चक्षु, रस-जिभ्या, घ्राण-सुगन्ध अर्थात् कहना-सुनना इत्यादि जो कुछ माया जनित सामग्री श्राव्य-दृश्य है। उसे तुच्छ मान कर वाक्य से अतीत शुद्ध स्वरूप आतम, जो सर्वदा निष्कलंक है, ऐसे में निश्चय किया। ज्ञानीजन भूतकाल और भविष्य की चिन्ताओं को त्याग कर वर्तमान में निष्प्रह-निश्चिंत रहते हुए हित की चिन्ता को भी नही करते है। नित्य प्रति आत्म स्वरूप चेतन में स्थिर चित ज्ञान के सूर्योदय प्रकाश में निश्चय धारक है। एक मात्र कल्याणमय (वासना वर्जित)

के लक्ष्य को दृष्टिगत निष्पक्ष भाव से चातुर्यता के साथ सुखमय रमणीय राम की दक्षता को गाते है।

यह अवधूत ज्ञानी के द्वितीय अक्षर 'व' की व्याख्या में स्वामी सुखराम जी महाराज द्वारा काव्य कथन किया गया है।

(श्लोक)

**धूलिधूसरगात्राणि धूतचितो निरामयः।**
**धारणध्याननिर्मुक्तो धूकारस्य लक्षणम् ॥3॥**

'धू' अक्षर श्लोकानुवाद

(मनोहर छन्द)

**भूमि तेज अरु पाणी, गगन समीर जाणी।**
**धूलि धूसर गात्राणी, पंच को विकार है॥**
**माया आदि पंच भूत, त्यागी सब अवधूत।**
**निरमाया अनुसूत, धोयो चित सार है॥**
**निर्मुक्त धरे ध्यान, बोध रूप सुख खान।**
**आप ते न माने आन, योई निरधार है॥**
**'सुखराम' निज मर्म, धकार को यह धर्म।**
**कह्यो सब अनुकर्म, धकार विचार है॥3॥**

*शब्दार्थ–* **समीर**=वायु, प्राण, पवन। **धूलि**=गर्द, धूल, रेणु, रज, मही। **धूसर**=धूल भरा, खाकी, धूल के रंग का। **गात्राणी**=देह, शरीर के अंग, तीनों शरीर, गात्र। **निरमाया**=(निर्माया) प्रपंच या माया-छल रहित। **अनुसूत**=अनुस्यूत, सीया या पिरोया हुआ, श्रेणी वद्ध गूंथा हुआ, क्रमवद्ध। **आन**=अन्य, दूसरा, अकड़, ऐण्ठ, लिहाज, दबात, और। **निरधार**=निश्चय करने या ठहराने का विवेक युक्त काम। **योई**=यही, यह, ये। **मर्म**=रहस्य, भेद, स्वरूप, गूढ रहस्य, तत्त्वसार, गोपनीय मूल। **धकार**=हिन्दी वर्णमाला का उन्नीसवां वर्ण, धर्म-धन, तवर्ग का चौथा वर्ण। **अनुकर्म**= क्रम, सिलसिला, शृंखलाबद्ध, अनुक्रम।

*भावार्थ–* समस्त ब्रह्मण्ड का भौतिक स्वरूप यह आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी के पाँच तत्त्वों की रचना है, यह सब पाँच तत्वों के विकार का उपादान कार्य है।

इस तमोगुण (तामसिक) रचना सहित रजो-सतो मयी पंच-भूत के माया मय प्रपंच समस्त का जिस अवधूत ने त्याग कर दिया है। वह सदैव माया रहित (निर्माया) से श्रेणीबद्ध

किया गया अर्थात् अपरा की अष्टधा (पंच तत्व एवं मन बुद्धि चित) माया एवं परा (जीवाभूति) चेतन के साथ पिरोई (माला मणके व्यतिरेक में सूत्र अनव्य की भाति है। तत्वज्ञानी ने उस सूत्र धार परा-अन्वयय को सार समझ कर (अपरा-व्यतिरेक को धोकर दूर करके) चित में परा को धारण कर लिया है।

जो परमतत्त्व ज्ञान (बोध) रूप सुख भण्डार है, निर्मुक्त (जीवन्मुक्त) ज्ञानी जन उन्हीं को ध्यान धारण करते हैं। आत्मज्ञानी स्वयं आत्मतत्त्व के अतिरिक्त किसी की मान्यता स्वीकार नही करते है। यह परम निश्चय विवेचित है।

स्वामी सुखरामजी महाराज निज भेद मय रहस्य को कथन करते हुए 'ध' अक्षर का धर्म प्रस्तुत करते है कि यह अवधूत शब्द के तीसरे अक्षर को शृंखलाबद्ध करके विचार सहित कथन किया है।

*(श्लोक)*

**तत्त्वचिन्ता धृता येन चिन्ताचेष्ठाविवर्जितः।**
**तमोहंकारनिर्मुक्तस्तकारस्तस्य लक्षणम् ।।4 ।।**

## 'त' अक्षर श्लोकानुवाद

(मनोहर छन्द)

**तत्व चिन्ता धृता येन, और नाहि लेन देन।**
**भक्ति रु विचार नैन, देखे निज रूप है॥**
**चिन्ता अरु चेष्ठा सूल, कारण सूक्ष्म स्थूल।**
**जड़ सेई गयो मूल, आतमा अनूप है॥**
**तम अहंकार जो तो, निरमूल अनहोतो।**
**निर्मुक्ति ताते सोतो, चेतन स्वरूप है॥**
**तकार को सार शोध, आन भ्रम मेट्यो खोद।**
**'सुखराम' महाबोध, अवधूत भूप है॥4॥**

*शब्दार्थ–* **तत्त्व**=वास्तिविक स्थिति, सारवस्तु, सारांश, ब्रह्म, आध्यात्मिक तत्त्व। **धृता**=निश्चय को स्थिर रखने वाला, धैर्यवान, धीर पुरुष। **चेष्ठा**=चेष्टा, शरीर की वह मुद्रा या स्थिति जिसके द्वारा चित्त का भाव प्रकट होता है, प्रसन्न, परिश्रम। **सूल**=शूल, बड़ा लम्बा नुकीला कांटा, पीड़ा, दर्द, सूली, मृत्यु, असह्य वेदना। **सेई**=सहित, सारा, पूरा। **निर्मुक्ति**=मुक्ति, छुटकारा, मोक्ष, मुक्तस्वरूप, मुक्तिरूप। **तकार**=नौका, पूण्य, अमृत, बुद्ध, हिन्दी वर्णमाला में सोलहवां वर्ण, तवर्ग का

प्रथम। **शोध**=विचार द्वारा संशोधित करके। **आन भ्रम**=अन्य संशय, कई सन्देह, शक, मिथ्या ज्ञान, धोखा, और का और समझना। **भूप**=राजा, ऐश्वर्यवान, भू, नेता, भूपग, भूपति, भूपाल। **अनहोती**=होते हुए भी अनिष्ट अनित्य रूप से अनहोती व्यर्थ ही है।

*भावार्थ*– तत्त्व का चिन्तन धारण करके सर्व चिन्ता को ध्वस्त रूप वर्जित कर दी है। संसार में कोई किसी से कोई कुछ अपेक्षात्मक लेन-देन नहीं है। केवल मात्र भक्ति मय सत्यासत्य विचार रूपी चक्षु द्वारा स्वयं निज रूप को देखते है।

प्राणी मात्र के लिये चिन्ता और चेष्टा दोनों नुकीले कांटें अर्थात् सूल के समान सदैव जीवन में खटकते रहते हैं। इस स्थूल-सूक्ष्म, कारण रूप को जड़ (मूल) सहित उत्थापन (नष्ट) करके निर्दोष साक्षी अनूप आत्म तत्व का तारतम्य जाना। तमोगुण (दृश्य-श्राव्य) की भौतिक सृष्टि को सर्व निर्मूल असत्य अर्थात् परिवर्तन शील नाशवान अन होती मानी है। इन सर्व रजो तमो प्रपंच से चेतन स्वरूप सदा निर्मुक्त कल्याणकारी एवं परे है। तत्त्वरूप 'त' अक्षर को सार-तत्त्व शोध करके अन्य सर्व भ्रम खोद कर जड़-मूल से मिटा दिया।

स्वामी सुखरामजी महाराज कथन करते है कि रमणीय (सुन्दर) रमता पुरुष (व्यापक तत्त्व) राम सुख स्वरूप है, वह सन्त महा बोध (ज्ञान) धारण करके अवधूत शब्द के चौथे अक्षर 'त' तत्व मय भूप (राजाधिराज) हो कर रहते है।

*पाठ फल-मनोहर छन्द*

**अवधूत गीता पढे, हीया में धरत दृढ़े।**
**विचार करे रु बढे, परम लाभ पावही।।**
**परम लाभ पारब्रह्म, निज स्वरूप नहिं भ्रम।**
**अकर्म विकर्म कर्म, रहित रहावही।।**
**गुरु पाव जीयाराम, सुखराम सोई धाम।**
**नहीं जाँ अकाम काम, ज्ञानी थिति पावही।।**
**सनातन ज्ञान धन, पायो जु अनन्त जन।**
**आनन्द अखण्ड घन, विचार ते आवही।।5।।**

*शब्दार्थ*– **अवधूत**=साधु, संन्यासी, योगी, विनष्ट, व्यवस्थापित, चेतनावान, अलमस्त, विरक्त, निष्प्रह, अपरिवादी, समुचित आशा-वासना सहित शरीर को धूलि मय विनष्ट करके या जान कर परम तत्व का चिन्तन करने वाला। **द्रढे**=दृढ़ धारणा, मजबूत लक्ष्य, अडिग ध्येय।

**अकर्म**=बुरे कर्म, नशे-व्यशन, निन्दा-झूँठ, हिंसा-परदोष चिन्तन आदि। **विकर्म**=निषिद्धकर्म, अपकर्म, पाप कर्म, लूट-खसोट, मारपीट, अशास्त्रीय उत्पात इत्यादि। **कर्म**=जो किया जावे, काम, कार्य, कृत्य, धार्मिक, कार्य, जीवन के नित्य-नियमित, नैमितिक या करने योग्य कार्य। स्नान, ध्यान, पूजा-पाठ, आजीविका आदि के लिये शरीर निर्वाह हेतु किये जाने वाले नैतिक-व्यवहारिक कार्य।

प्रकृति के अनुसार शास्त्र विधि से नियत किये हुए जो वर्णाश्रम के धर्म और सामान्य धर्मरूप स्वाभाविक कर्म है, उन्हे स्वधर्म, सहज कर्म, स्वकर्म, नियत कर्म, स्वभावज कर्म (स्वभाव-नियतकर्म) इत्यादि विविध नामों से कहे गये है।

फल और आसक्ति को त्याग कर भगवदाज्ञानुसार शास्त्र विहित केवल भगवदर्थ समत्व बुद्धि से कर्म करने का नाम 'निष्काम कर्म योग' है। इसी को समत्वयोग, बुद्धियोग, कर्मयोग, तदर्थ काम, मदर्थ काम, मत्कर्म, इत्यादि नामों से भी कथन किये गये है।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं– सात्विक, राजसी और तामसी।

1. सात्विक–वेद की आज्ञानुसार हो, जिन से सात्विक

गुणों की वृद्धि होती है। 2. राजसिक–जो कर्म किसी कामना पूर्ति के लिये किये जाते हो। 3. तामसिक–तामस गुण की वृद्धि वाले, शास्त्रों द्वारा निषिद्ध किये गये कर्म।

कर्म के भेद तीन होते है–नित्य, नैमितिक, और काम्य। उनमें से प्रत्येक के दो भेद होते है, विधि (विधेय) और निषेध (निषेध्य), इस प्रकार यह कुल भेद से छः प्रकार के कर्म होते है।

1. **नित्यविधि**–जो नित्य करने के लिये-स्नान, सन्ध्या, दान, पाठ-पूजा आदि होते है।
2. **नित्य निषेध**–जैसे चोरी करना, निन्दा, झूँठ बोलना, दुर्व्यशन-नशा करना आदि।

1. **नैमितिक विधि**–जो किसी निमित से किये जाय, तीर्थ, पर्व, अनुष्ठान, ग्रहणदान, गंगाजल स्नान, पारणा आदि।
2. **नैमितिक निषेध**–जैसे ग्रहण में भोजन नही करना, तीर्थों को अपवित्र नहीं करना, यज्ञादि में हिंसा नही करना आदि नैमितिक कार्यों में निषैध करते है।

1. **काम्य विधि**–किसी कामना पूर्ति के लिये किया गया कर्म, लक्ष्मी पूजन, पुत्रेष्टी यज्ञ इत्यादि।

2. **काम्य निषेध**–किसी का अति करने वाले काम्य कर्मों का निषेध जैसे तन्त्र, टोटकादि।

कर्म की श्रेणियाँ तीन होती हैं–*(1) अनुमोदित*– वेद द्वारा करने योग्य कर्म। *(2) निषिद्ध*– शास्त्रों द्वारा न करने योग्य कर्म। *(3) मिश्रित*– सन्त महापुरुषों द्वारा बतलाये गये विधि-निषेध आदि कर्म मिश्रित कर्म कहलाते हैं।

*भावार्थ*– अवधूत गीता जो चार अक्षर '**अ व धू त**' शब्द का तत्त्व रूप, घी (सार) है, इसे जो नित्य पाठ में पठन कर ले और दृढतापूर्वक हृदय में धारण करके निरन्तर विचार करते हुए आगे बढ़े, अर्थात् आशा एवं वासनामय धूल (मही) की निवृति समझ कर तत्व का चिन्तन करता हुआ साधना को गति प्रदान करके परम लाभ की प्राप्ति करते है।

निज स्वरूप परमानन्द की प्राप्ति का परम लाभ पाकर भ्रम रहित लक्ष्य में दृढ़ता कर लेते है। उन के जीवन में वे तत्वदर्शी ज्ञानी कर्म, अकर्म, विकर्म रहित नित्य निष्काम आशक्ति हीन रहते है।

सर्व जीवों में श्रेष्ठ रमणीय रमता पुरुष ब्रह्म स्वरूप के साकार चिन्मय शब्द वाङ्मयी स्वामी जीयारामजी सद्गुरु को

पाकर वही सुख स्वरूप, रमण कर्ता की सुखराम धाम निश्चित की है। उन निश्चल ज्ञानीजनों की स्थिति में काम अकाम इत्यादि कोई द्वन्द्व प्रपंच नहीं रहा है।

सच्चिदानन्द का निश्चय किया है, जो सनातन (अनादि अनन्त) ज्ञान स्वरूप ठसाठस भरपूर (घनानन्द) है। वह अखण्ड आनन्द घन सत्य विचार से आता है, जिसे अनन्त भक्त-ज्ञानी जनने प्राप्त किया अर्थात् पाया है।

*इति अवधूत गीता समाप्त*

✤ ✤ ✤

ॐ

*श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः*

## अनन्तश्री आद्य शंकराचार्य विरचित 'उपदेश पंचक'

*श्रीवैष्णव विरक्त गद्याचार्य*

*अनन्त श्री स्वामी जीयाराम जी महाराज के परम शिष्य*

**श्री श्री 108 स्वामी सुखराम जी महाराज कृत**

## आशीर्वाद मंगल

## श्लोकानुवाद उपदेश पंचक

*(श्लोक)*

वेदो नित्यमधीयतां तदुदितं कर्म स्वनुष्ठीयताम्
तेनेशस्य विधीयतामपचितिः काम्ये मतिस्त्यज्यताम्।
पापौघः परिधूयतां भवसुखे दोषोऽनुसंधीयताम्
आत्मेच्छा व्यवसीयतां निजगृहात्तूर्णं विनिर्गम्यताम्॥

*((भाषानुवाद – मनोहर छन्द)*

भो शिष्य कहत गुरु, वेद नित्याध्ययन करु।
वेद विषै कहै कर्म, अनुष्ठान कीजिये॥

**ईश्वर अर्चन धार, कामना बुद्धि निवार।**
**पाप के समुह कर्म, वेग धोय दीजिये॥**
**संसार सुख निवारि, आत्मा की इच्छा धारि।**
**निज हूँ भवन ते जु, गवन वेग कीजिये॥**
**वाक गुण ग्राम कह, 'सुखराम' शंकर यों।**
**ताको करि के विचार, निश्चय उर लीजिये॥1॥**

*शब्दार्थ*– **भो**=हे !, सम्बोधन वाचक, पुकारना। **नित्याध्ययन**=नित्यप्रति नियमबद्ध शास्त्र-वेद, सन्त-वाणी का स्वाध्याय-अध्ययन। **विषै**=में, बीच। **अनुष्ठान**=किसी कार्य का आरम्भ, शास्त्र विहित नियमानुसार विधि-युक्ति सहित प्रयोग करके पूजा इत्यादि अवधि में सम्पन्न करना। **अर्चन**=पूजन, पूजा, महावाक्य, वाणी का एकांश कथन। **गुणग्राम**=गुणों का समूह, गुणों की खान।

*भावार्थ*– तत्वार्थी ज्ञानी सद्गुरु आशीर्वादमय उपदेश देते हुए कथन करते है। हे मुमुक्षू ! जिज्ञासु ! अपने स्वस्थ जीवन में सदैव नित्याचार धर्म पालन करते हुए सदा वेद-शास्त्राध्ययन करते रहो और वेद (ज्ञानमार्ग) में कहे गये शुभ कर्तव्य शील पुण्य कर्मों का विधिवत पालन (अनुष्ठान) करते रहो।

ईश्वर की नवधा भक्ति (सतसंग, शास्त्र कथा में रूचि-प्रेम, मान रहित सद्गुरु चरण सेवा, ईश्वरीय गुणानुवाद का निष्कपट गायन, गुरु-हरि मन्त्र में दृढ़ विश्वास एवं भजन-स्मरण, शम-दम, सज्जन धर्म, ईश्वर दृष्टि का समता भाव, सन्त-सतसंग में ईश्वरीय भाव, यथालाभ सन्तोष, परदोष चिन्तन रहित एवं सरलता का जीवन) के साथ आर्जव-अर्चना धारण करते हुए मन की सभी आशक्त कामनाओं का निवारण करो। समुच्चित तन-मन वाणी जन्य व्यसन-दोषादि की अविलम्ब निवृति करो अर्थात् सात्विक शुभ कर्म प्रबलता से अशुभ (पाप) कर्मों के संस्कारित अंकुर को धो दो।

संसार के भौतिक सुख (पंच विषय शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धादि) का संयम करके आत्मतत्व प्राप्ति की अप्रबल तीव्र जिज्ञासा धारण करो और असार-नाशवान जगत से उपराम होकर अपने आत्म तत्व के निज घर की ओर शीघ्रतम गमन करो।

आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य जी इस प्रकार वाणी के गुणों का आनन्द मय बखान करते हैं जो सुखस्वरूप रमणीय रमता राम की प्राप्ति कारक है, जिसे स्वामी सुखराम जी महाराज

विचार करके कथन करते है कि इन वाक्यामृत उपदेश को हृदय में निश्चय कर लो।

(श्लोक)

**सङ्गः सत्सु विधीयतां भगवतो भक्तिर्दृढाधीयताम्**
**शान्त्यादिः परिचीयतां दृढातरं कर्माशु संत्यज्यताम्।**
**सद्विद्वानुपसृप्यतां प्रतिदिनं तत्पादुका सेव्यताम्**
**ब्रह्मैकाक्षरमर्थ्यतां श्रुतिशिरोवाक्यं समाकर्ण्यताम्।।2।।**

(भाषानुवाद – मनोहर छन्द)

**सत हु संगत सत, पुरुषन की कर नित।**
**सुभक्ति भगवान हु की, दृढ़ उर धारिये।।**
**शांत्यादि संचय धरि, कर्मनि को त्याग करि।**
**सेव विद्वान वरि, चरण सु सारिये।।**
**ब्रह्म एक अंक साधि, करिये नित आराधि।**
**श्रुति में शिरोमणि वाक, तिन को उचारिये।।**
**कहै 'सुखराम' जीया, राम ते युगति पाई।**
**तासों शुद्धबुद्धि आई, कुबुद्धि निवारिये।।2।।**

*शब्दार्थ*– पुरुष=पुरुषार्थ शील सज्जन-सन्तजनों। सुभक्ति=श्रेष्ठ सात्विक भाव सहित श्रद्धा सम्पन्न भक्ति।

**शान्त्यादि**=शान्ति दायक मन की वह भक्ति-ज्ञान योग जनित अवस्था, जिसमें क्षोभ, चिन्ता, उद्वेग, दुःख आदि न हो, राग-द्वेषादि विकार रहित सात्विक गुणों का उत्पादन हो। संचय=समूह, ढेर, एकत्रीकरण, संग्रह करना, अधिकता। श्रुति=सुनने की इन्द्रिय द्वारा श्रवण करना, सुनी हुई बात, अभिधान। **शिरोमणि वाक**=सर्व श्रेष्ठ-सब से अच्छा, महावाक्य, प्रणव मन्त्र, सतगुरु उपदेश, उपनिषद् द्वारा कथित महावाक्य।

*भावार्थ*– सन्त महापुरुष जीवन-कल्याण के लिये उपदेश देते है– सत्पुरुषों की सदा सत्संगत करते रहो। परमेश्वर की सात्विक भक्ति को हृदय में दृढ़ विचारों के साथ धारण करो। शम, सन्तोष, विचार, सतसंग द्वारा उपार्जित सद्गुणों को चित में शान्त्यादि सहित संचय करके, सभी अशुभ कर्मों को त्याग दो। विद्वानों की चरण सेवा करते हुए उन के वाणी के श्रेष्ठ पदांश (चरण) की सुधि (चिन्तन) करते रहो। एक सत् चेतन ब्रह्म को हृदय (अंक) में साध (दृढ़ निश्चय) करके नित्य प्रति हर क्षण आराधना करें। वेद-शास्त्र, सन्त वाक्यों में श्रवण किये अमूल्य श्रेष्ठ शिरोमणि (श्रुति) वाक्यों का सदैव लेखन-वाचन, आचरण-प्रकाशन करें।

स्वामी सुखराम जी महाराज कथन करते है कि यह स्वामी जीयाराम जी (सतगुरु) से युक्ति प्राप्त की। इसके द्वारा यह शुद्ध बुद्धि की चेतना आई, जिस का कथन किया गया इसे नित चित में धारण करते हुए अशुभ भाव सहित कुबुद्धि की निवृति करो।

*(श्लोक)*

**वाक्यार्थश्च विचार्यतां श्रुतिशिरः पक्षः समाश्रीयतां**
**दुस्तर्कात्सुविरम्यतां श्रुतिमतस्तर्कोऽनुसंधीयताम्।**
**ब्रह्मास्मीति विभाव्यतामहरहर्गर्वः परित्यज्यतां**
**देहेऽहंमतिरुज्झ्यतां बुधजनैर्वादः परित्यज्यताम्॥**

*(भाषानुवाद – मनोहर छन्द)*

**महावाक्य को विचार, श्रुति पक्ष दृढ धार।**
**खोटी तर्क को निवार, श्रुति तत्व को लहे॥**
**ब्रह्म में हूँ ऐसे लाग, जानि अभिमान त्याग।**
**अहं बुद्धि दूर भाग, भिन्न इन ते रहे॥**
**बुद्धि मान जन साध, त्याग तिन ते विवाद।**
**इन हू ते लेके आदि, ऐसी मति को गहे॥**

**'सुखराम' आठों याम, एक व्रत हो अकाम।**

**होय जग उपराम, सतगुरु सों कहे ॥3॥**

*शब्दार्थ*– **महावाक्य**=वेदोक्त चार महावाक्य–

(1) **'प्रज्ञानमानन्दब्रह्म'** (ऋग्वेदीय ऐतरेयोपनिषद् 5/3)

(2) **'अहं ब्रह्मास्मि'** (यजुर्वेदीय बृहद. 1/4/10)

(3) **'तत्त्वमसि'** (सामवेदीय छान्दोग्योपनिषद् 6/8/7)

(4) **'अयमात्मा ब्रह्म'** (अथर्ववेदीय माण्डूक्योपनिषद् 2)

**आठोयाम**=आठों पहर, चार पहर दिन (12 घण्टे) और चार पहर रात (12 घटे) का समय।

*भावार्थ*– तत्त्वज्ञ सद्गुरु द्वारा प्रदत्त वेद विहित उपनिषद् महावाक्यों का मनन-चिन्तन विचार करते हुए श्रवण किये (श्रुति) सत्शास्त्र पक्ष को दृढता पूर्वक धारण करो। अपने मलीन चित की जल्पावाद-वितण्डावाद सहित खोटी (अशास्त्रीय) तर्क को निवारण करके निरन्तर श्रुति (श्रवण किये) वेद-तत्व को धारण करो।

'अहं ब्रह्मास्मि' 'मैं शुद्ध ब्रह्म हूँ' ऐसी दृढ लाग (धारणा) में लग कर तन-मन, वाणी, जन्म, विद्या, जोभन, जाति,

धन, प्रभुता, रूप-लावण्य, कुलाभिमान सहित सभी गर्व (अभिमान)एवं दुर्व्यसन-नशों एवं दोषों का त्याग करो। अहंकृति की मदोन्मत वृति-प्रवृति, गर्व से सदा के लिये दूर भाग कर इन से अलग ही रहें।

जो विद्वज्जन सन्त-सद्गुरु प्रेमी जन मुमुक्षू-जिज्ञासु अथवा ज्ञानीजन, साधना रत साधु पुरुष हो, उन से व्यर्थ वाद-विवाद त्याग कर,उन सत्पुरुषों से भी शास्त्र विहित ऐसी श्रेष्ठ बुद्धि के सद्गुण ग्रहण करते रहें।

स्वामी सुखराम जी महाराज कथन करते है कि एक मात्र जगत-निष्काम (अकाम) से उपराम हो कर आठों पहर अपना साधननिष्ठ संवाद सतगुरु के प्रति सदैव कहते रहें।

*(श्लोक)*

**क्षुद्व्याधिश्च चिकित्स्यतां प्रतिदिनं भिक्षौषधं भुज्यतां**
**स्वाद्वन्नं न तु याच्यतां विधिवशात्प्राप्तेन संतुष्यताम्।**
**शीतोष्णादि विषह्यतां न तु वृथा वाक्यं समुच्चार्य्यताम्**
**औदासीन्मभीप्स्यतां जनकृपानैष्ठुर्यमुत्सृज्यताम्॥**

(भाषानुवाद – मनोहर छन्द)

**क्षुधा रूपी व्याधि रोग, करन औषधि योग।**
**जाहि दीजे भिक्षा भोग, नित्य ता जिमाय के।।**
**स्वाद में न इच्छा कोय, विधि ते जो प्राप्त जोय।**
**ताहि से सन्तुष्ट होय, सन्तोष समाय के।।**
**शीत उष्ण द्वन्द सहे, वृथा वाक्य हु न कहे।**
**उदासीन इच्छा गहे, गुरु ज्ञान पाय के।।**
**जन कृपा विषै वर, निष्ठा हू उत्पन्न कर।**
**'सुखराम' कह्यो हर, पंचक बनाय के।।4।।**

*शब्दार्थ–* **क्षुधा**=भूख, भोजन करने की इच्छा, लिप्सा, आसा। **व्याधि**=शारीरिक रोग, बीमारी, विपती, आफत, झंझट, बखेड़ा। **विधि**=प्रणाली, रीति, व्यवस्था, प्रबन्ध, पृकृति, नियति, प्रारब्ध, विधाता की गति, उचित भाव सहित। **उदासीन**=झगड़े-बखेड़े से अलग, विरक्त, तटस्थ, निष्पक्ष। **जन कृपा**=भक्त-दया, सन्त कृपा, हरिजन (सन्त) की कृपा। **विषै**=में, भीतर, अन्दर, मध्य।

*भावार्थ–* शरीरिक व्यवस्था एवं चितवृति के निश्चयार्थ उपाय साधन कहते है। स्थूल शरीर के साथ सूक्ष्म शरीर की

क्षुधा-पिपासा, आवागमन (जन्म मृत्यु) एवं हर्ष शोक की षट् उर्मी में प्रधान असाध्य रोग एक क्षुधा (भूख) है। इन की निवृति के योग्य औषधि का उपार्जन-मार्जन क्या है? मार्ग दर्शन है कि उस व्याधि रोग निवृति हेतु सात्विक भिक्षावृति से प्राप्त भोजन का भोग (प्रसाद) नित्य प्रति जिमाते रहो।

भांति-भांति के नाज (भोज्य प्रसाद) भिक्षा से प्राप्त सामग्री में भी गरिष्ठता स्वाद जन्य मृदुता के रस की इच्छा मत करो। जो कुछ नैतिक विधि युक्त प्राप्त हो जाय, उसी में सन्तोष धारण करे, सन्तोष वृत्ति से समाहित रहे।

भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, सुख-दुःख इत्यादि द्वन्द्व व्यथा को निर्द्वन्द्वता से सहन करते हुए वाणी से सदैव सत्य-मृदु एवं संयमित कम बोले अर्थात् कभी भी व्यर्थ चर्चा, प्रलाप या दुर्वाक्य नहीं कहना। व्यर्थ चेष्ठा रहित नित्य सतगुरु द्वारा प्राप्त तत्व ज्ञान का चिन्तन करना और उदासीन वृति को इच्छानुसरण धारण करना। संतवाणी-गीता, रामायण इत्यादि धर्म शास्त्र के वचनोपदेश से अन्तर्मन का अन्तर्भाव अथवा अन्तर्नाद जाग्रत होता है। शाश्वत शान्ति-सिद्धि एवं आत्म निर्भरता, आध्यात्मिक ज्ञान, निरन्तर सक्रिय जीवन का निश्चछल

स्वाध्याय बोध प्राप्त होता है और कायरता की कर्तव्यहीनता तथा पलायनवाद को चुनौती होती है। अतः द्वन्द का विसर्जन करने के लिये।

तत्त्वज्ञानी सन्त जन एवं सतगुरु कृपा में श्रद्धा विश्वास पूर्ण श्रेष्ठ निष्ठा उत्पन्न करके आत्मतत्व की प्राप्ति करें। आद्य जगद्गुरु श्री मत् शंकराचार्य (शिव) के उपदेश-पंचक को इस प्रकार भाषा काव्यबद्ध कथन करके स्वामी सुखरामजी महाराज ने कहा।

*(श्लोक)*

**एकान्ते सुखमास्यतां परतरे चेतः समाधीयतां**
**पूर्णात्मा सुसमीक्ष्यतां जगदिदं तद्बाधितं दृश्यताम्।**
**प्राक्कर्म प्रविलाप्यतां चितिबलान्नाप्युतरैः श्लियतां**
**प्रारब्धं त्विह भुज्यतामथ परब्रह्मात्मना स्थीयताम्॥**

*(भाषानुवाद – मनोहर छन्द)*

**एकान्त वशीय जाय, स्थित नित ही रहाय।**
**परम समाधि लाय, चित तां लगाईये॥**
**पूरण आतम देखि, तिन के विषै अनेक।**
**जगत कलपित पेखि, आत्मा ही पाईये॥**

**संचित को लय करि, आगामी हु दूर टरि।**
**प्रारब्ध हूं कर्म धरि, इहां ही भोगाईये।।**
**इन के पश्चात ब्रह्म, रूप हू करिके जान।**
**स्थित रहे है सयान, 'सुखराम' गाईये।।5।।**

*शब्दार्थ*– **कलपित**=कल्पित, जिसकी कल्पना की गई हो। मनमाना, फर्जी, मन-गढ़न्त, बनावटी, नकली। **संचति**= अनन्त जन्मों के तन, मन, वाणी द्वारा कृत-संकल्पित एकत्रित किये हुए, ढेर लगे हुए कर्म, संचिका में लगाया हुआ। **आगामी**=भविष्य, भावी, आनेवाला, क्रियमाण, वर्तमान के वर्तित। **सयान**=अधिक या पूरी अवस्था वाला, चतुर, बुद्धिमान, व्यस्क, ज्ञानी, तत्त्वदर्शी, तत्त्वज्ञ।

*भावार्थ*– परम तत्त्वज्ञ अथवा परम जिज्ञासु की दिनचर्या बतलाते है। नित्य चित्तवृत्ति तत्त्व में नैष्ठिक स्थिति से एकान्तवास से रहे। ब्रह्मतत्त्व की परम समाधि लाकर सत् चेतन सें चित्त लगाना है। सन्त-गुरुकृपा से परम पुरुषार्थ पूर्वक पूर्ण आत्मतत्त्व को दृष्टिगत (साक्षात्कार) करे, सृष्टिगत सर्व प्रपंच को कल्पित समझ कर आत्मतत्त्व की प्राप्ति में निष्ठा करे।

तत्त्व ज्ञानाग्नि से संचित कर्मों को जला कर निवृत करें और क्रियमाण (आगामी) कर्मों को निष्कामता अर्थात् अनासक्ति से दूर करके प्रारब्ध कर्मों को निष्प्रह रूप से यहीं इस लोक के शरीर में ही भोग चुका देने चाहिये।

तत्पश्चात सच्चिदानन्द ब्रह्म स्वरूप में निश्चित रूप से द्रढ अपरोक्षानुभूति से स्थिर होना चातुर्य है। ऐसी निर्मुक्तावस्था में सदा सुख स्वरूप रमणीय रमता पुरुष का गायन करते रहे। इस तरह उपदेश पंचक के पाँचवे श्लोक का भाषाबद्ध छन्द अनुवाद स्वामी सुखराम जी महाराज ने कथन किया।

*(श्लोक)*

**यः श्लोकपञ्चकमिदं पठते मनुष्याः**
**सञ्चितसत्यनुदिनं स्थिरतामुपेत्य।**
**तस्याशु संसृतिदावानलतीव्रघोरतापः**
**प्रशांतिमुपयाति चितिप्रासादात्॥**

*(भाषानुवाद – मनोहर छन्द)*

**कोई जो मनुष्य यह, श्लोक पञ्च नित्य पढे।**
**थिरता से अनुदिन, चिन्त वन लाय के॥**

**तिन सु पुरुष हूँ की, शीघ्र ही संसार रूपी।**
**तीव्र घोर अग्नि ताप, शान्त हो समाय के॥**
**कैसे शान्त होय याते, चेतन की प्रसन्नता से।**
**कह्यो यो कैलाशजा ते, शंकर सुनाय के॥**
**'सुखराम' भेद पाम, कीन्ही भाषा गुण धाम।**
**'जीयाराम' स्वामी के, शरण में आय के॥6॥**

*शब्दार्थ*– **अनुदिन**=नित्यप्रति, हररोज, प्रतिदिन, अनुदिवस। **कैलाश**=हिमालय की एक चोटी का नाम, स्वर्ग। **कैलाशजा**=हिमालय की बेटी, पार्वती, जगदम्बा, उमा। **पाम**=किनारी के छोर, पाकर के।

*भावार्थ*– प्रस्तुत उपदेश पंचक श्लोकानुवाद काव्य को नित्य प्रति पाठ करने का फलादेश कथन करते है। कोई भी मानव श्रद्धा-भक्ति से श्लोक सहित पद्य प्रस्तुत उपदेश पञ्चक अनुवाद का निरन्तर चिन्तन पाठ करे, उसे नित्य-नित्य निश्चलवृति की स्थिरता प्राप्त होगी। उस उत्तम पुरुष को संसार की तीव्र त्रय तापाग्नि ज्वाला से समाहित शान्ति प्राप्त होगी।

जगदम्बा पार्वती को शंकर ने अर्थ सहित श्रवण करवा के कहा कि वह पाठक-पाठी सदैव चेतन की प्रसनन्ता प्राप्ति

से चित शान्त्यादि परमानन्द की प्राप्ति करेगा। परम पुरुषोत्तम स्वामी जीयारामजी महाराज की शरण सामीप्यता में आकर परम तत्त्व की साधना का भेद पाय कर गुणधाम आद्य श्री मद् शंकराचार्य प्रणीत उपदेश पंचक को भाषा-पद्यात्मक में कहा।

*इति श्री मच्छङ्कराचार्य विरचित उपदेश पंचक ज्ञान समाप्त*

❖ ❖ ❖

**जीयाराम सतगुरु मिल्या, भिल्या संतन में जाय।**
**संतन से भक्ति मिली, भक्ति से हरि पाय॥**
**भक्ति से हरि पाय, हरि की क्रान्ति कैसी।**
**अनन्त सूर की ज्योति ज्यो, नहीं नख चरनन जैसी॥**
**सुखराम दास ता चरण में, निर्भय रहया समाय।**
**'जीयारामज' सतगुरु मिल्या, भिल्या संतन में जाय॥**

ॐ

*श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः*

*श्रीवैष्णव विरक्त गूदड़गद्याचार्य परमगुरु स्वामी हरिराम जी महाराज जोधपुर के परम शिष्य अनन्त श्री स्वामी जीयारामजी महाराज के ज्ञान-शिष्य श्री श्री 108 श्री स्वामी बनानाथजी महाराज कृत*

# परवाणा

## (यथार्थ प्रमाण पत्र)

*(चौपाई छन्द)*

**ब्रह्म गुरु सन्तन की दया, आतम ज्ञान उदय निज भया।**
**परवाणा प्रकट कह दाखूँ, भिन्न भिन्न निश्चय कर भाखूँ।।1।।**

*शब्दार्थ–* **ब्रह्म**=नित्य चेतन सता जो मूल कारण और सत चित आनन्द स्वरूप। **गुरु**=सतगुरु, उपदेष्ठा, सच्चा और अच्छा गुरु, उस्ताद, मन्त्रविद्। **सन्तन**=सन्तों, सन्तजन, साधु, सन्यासी, विरक्त, महात्मा, ईश्वर भक्त। **दया**=प्रसाद, कृपा, अनुकम्पा। **परवाणा**=आज्ञापत्र, अनुमति पत्र, वह कथन तत्व जिस से सबूत, सत्यता, सच्चाई, निश्चय, मर्यादा, प्रतीति, साख, मान, यकीन की दृढ धारणा सिद्ध हो, प्रामाणिक

बात, प्रमाण पत्र, स्वीकार करने योग्य, यथार्थ बात, परवान, सत्य साधन, अवधि। **दाखूँ**=कथन करके बताऊँ, दक्षता (चातुर्य) के साथ वर्णन करता हूँ।

*भावार्थ*– श्री स्वामी बनानाथ जी महाराज यथार्थ एवं प्रमाणिक परवाणा कथन के प्रारम्भ में मंगलाचरण एवं विवेक के परम कारण श्री परब्रह्म परमात्मा, सतगुरु एवं सन्तों की साम्य दया को श्रेय देते है-कि इन की परम कृपा से मानव देह में विवेकादि साधन चतुष्टय सहित सतसंग-सान्निध्य परम तत्व आतम ज्ञान का प्रादर्भूत ज्योतिर्मय प्रकाश उदय हुआ।

अन्त:करण की पुरुषार्थ से उपयुक्त तीनों कृपा पाकर निश्चित मर्यादा से अनुमति पत्र स्वरूप परवाणा को सर्व अज्ञतज्ञानुवृति मुमुक्षूजनों के अवगतार्थ प्रकट दक्षता पूर्वक भिन्न-भिन्न कर विविध विधि से कथन करके कहता हूँ।

**नमो नमो गुरुदेव मनाऊँ, दे परिक्रमा सीस नमाऊँ।**
**ऐसी दया करो गुरु मेरा, काया गढ का करो निवेरा ॥2॥**

*शब्दार्थ*– **परिक्रमा**=चारों ओर घूमना, फेरी, चक्कर, परिसीमा में घूमना, किसी तीर्थ अथवा मन्दिर के चारों ओर घूमने के लिये बना हुआ मार्ग, परिक्रमण, प्रदक्षिणा। **काया**

गढ=शरीर रूप किला, देह का दुर्ग, तन का कोट। **दया**=कृपा, महर, मेहरबानी, मेहरा। **निवेरा**=निर्णय, निबेड़ा, निपटारा, विवेचन सहित निर्णय, निवेड़ा, काया गढ का विवरण–

(1) जाग्रत अवस्था– पांच ज्ञान इन्द्रिय, पांच कर्म इन्द्रिय, पांच प्राण, पंचमहाभूत, मन, बुद्धि, चित, अंहकार, इन चौबीस तत्वों से मिलकर यह अवस्था बनती है। यह विश्व निष्ठ अवस्था पांच ज्ञान इन्द्रिय, पांच कर्म इन्द्रिय और चार अन्तःकरण, इन चौदह इन्द्रिय के चौदह देवता, चौदह विषय मिलकर ब्यालीस तत्व के व्यवहार का नाम जाग्रत अवस्था है।

(2) स्वप्न अवस्था– पांच प्राण, दश इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, इन सतरह तत्वों से बनती है। यह जीवकृत ब्यालीस तत्वों द्वारा कण्ठ गत हिता नामक नाड़ी जो बाल के हजारवें भाग शुक्ष्म में अनन्त जन्मों के संस्कारों को उकेरती है। वासनामय संस्कार उत्पन्न होकर दर्शित होते है।

(3) सुषोप्ति अवस्था–चेतन्य हीनता या समाधि की होती है, अज्ञान काल में तत्त्व क्रिया एवं संस्कार प्रज्ञा बुद्धि में लय हो जाते है, यह मन-बुद्धि की वृत्ति मय अज्ञान की अवस्था है।

यही तीन अवस्थाऐं क्रमशः स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर को सचेत करती हुई, तुरिय चेतन तत्व परा शक्ति के आश्रित है। विशेष ज्ञान के लिये पढ़ें-अचलराम ग्रन्थावली। अपनी शास्त्रीय नैतिक मर्यादा के सद्गुरु शरणागति आदर्श को प्रमाणित करते है।

*तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।*
*उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥* (गीता 4/34)

अर्थात् उस ज्ञान को तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझ, उनको भलीभाँति दण्डवत्-प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से और कपट छोड़कर सरलता पूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्मतत्त्व को भली भाँति जानने वाले ज्ञानी महात्मा (सद्गुरु) तुझे उस तत्त्व ज्ञान का उपदेश करेंगे।

*भावार्थ*–शास्त्र-सन्त, ऋषि परम्परा के अनुसार सर्वप्रथम वर्तमान और भावी रूप से बाह्य एवं अन्तर्हित मार्ग दर्शन हेतु सतगुरु को प्रणाम करके प्रसन्नता प्राप्त करूँ। विधिवत साष्टांग दण्डवत-परिक्रमा देकर मस्तिष्क से नमन करता हूँ।

हे गुरुदेव ! इस दास पर कृपा करो और इस शरीररूपी दुर्ग का निर्णयपूर्वक विवेचन करके कल्याण का मार्गदर्शन करो।

**प्रथम पांच पच्चीसों जाणूँ, तीनों गुण तुरन्त पिछाणु।**
**रजोगुण तमोगुण सतगुण माया, जामे भँवरा भ्रम भुलाया ॥3॥**

*शब्दार्थ*– **पाँच**=शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध पांच तन्मात्रा।

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आकाश | वायु | तेज | जल | पृथ्वी | – पांच तत्त्व |
| श्रौत्र | त्वचा | चक्षु | जिभ्या | घ्राण | – पांच ज्ञानेन्द्रिय |
| वाक | पाणि | पाद | उपस्थ | गुदा | – पाँच कर्मेन्द्रिय |

**पच्चीसों**=पच्चीस पृकृति, तत्वानुसरण हेतु। तत्त्व आकाश वायु तेज जल पृथ्वी की पहिचान स्वरूप बोध (ज्ञान) जान लूँ।

| | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| (1) | आकाश | शोक | प्रसारण | निन्द्रा | लार | रोम |
| (2) | वायु | काम | धावन | तृष्णा | स्वेद | त्वचा |
| (3) | तेज | क्रोध | वलन | क्षुधा | मूत्र | नाड़ी |
| (4) | जल | मोह | चालन | क्रान्ति | शुक्र | मांस |
| (5) | पृथ्वी | भय | आकुंचन | आलस्य | शोणित | हाड |

**तीन गुण**=रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण, कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, पंचतत्त्व, सृष्टि, वाक, श्रौत्र, (भौतिक जगत) पानी,

त्वचा, (भौतिक दृश्य) पाद, चक्षु, **(पच्चीस प्रकृति)** उपस्थ, जिह्वा, **(पच्चीस प्रकृति)** गुदा, घ्राण, **(पच्चीस प्रकृति)** पंच-प्राण, चार-अतःकरण, **(पच्चीस प्रकृति)** तीन-अवस्था-जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति।

तीन-देश (स्थान)-चक्षु, कण्ठ, बुद्धि। **तीन-जीव-** विश्व, तेजस, प्राज्ञ। समस्त कारण-कार्य सहित बोध रूप तुरिया सामग्री की त्वरित (शीघ्र) पहचान कर सकूँ।

**भंवरा**=जीवात्मा, हंस, आवर्त, गर्त, प्राण पक्षी, चिदाभास सहित सत्रह तत्व। भ्रमण करने वाला, चक्कर, काटने वाले (भव भ्रमण शील) जीव को भँवरा या भँवर कहते है।

**भ्रम**=किसी वस्तु को और की और समझना, मिथ्या ज्ञान, धोखा, संशय, सन्देह, शक, मूर्च्छा, बेहोशी।

*भावार्थ–* आप की दया से सर्व प्रथम पाँच तत्व सहित पञ्चीकरण के सार्थक पच्चीस प्रकृति सहित त्वरित तीनों गुण-धर्म सामग्री की अयथार्थ प्रमा और यथार्थ प्रमा की पहिचान करूँ।

रजोगुण सामग्री, तमोगुण की भौतिकता और सतोगुण के उपादान रूप से माया-विचार का परिचय जान लूँ। जिस

काया स्थूल एवं कारण के बीच कुटस्थ चेतन चिदाभास सहित शूक्ष्म देह की सामग्री में जीव भ्रमर भूल भूलैया पा रहा है अर्थात् चिद्जड़ ग्रन्थि रूप त्रिगुणात्मक उलझन में फंस कर उलझ रहा है।

**भटकत भँवर फिरे बहु केरा, भांति भांति कर माया घेरा।**
**एक पलक भर ठहर न पावे, काया गढ मे किम कर जावे ।।4 ।।**

*शब्दार्थ*– **भटकत**=व्यर्थ में इधर-उधर घूमते रहता, लख चौरासी के भव का भ्रमण करता रहना। **घेरा**=फेरा, चक्रावर्त, वृत, परिधि, चारों ओर से घिरने या आच्छादित होने की अवस्था। **किम**=कैसे, क्यों कर।

*भावार्थ*– इस त्रिगुणात्मक माया जाल में जीवात्मा भ्रमर भूला हुआ जन्म-मृत्यु के भव-भ्रमण में भटकता, अनन्त काल से बहुत वार चक्रावृत फेरे फिरता रहा है। भाति-भाति के माया कृत छल, कपट, भ्रम-भ्रान्ति, अध्यास के घेरे में फँसा हुआ भ्रमण करता रहा है।

एक क्षणभर भी शान्तिपूर्वक स्थिरता की प्राप्ति नहीं होती है, तब काया गढ़ (शरीर के किले) में परिचय पाकर कैसे प्रवेश करता है अर्थात् शरीर क्यों ? कैसे ? धारण करता है।

**काया गढ करड़ो है भाई, जाकी सन्त करे ओलखाई।**
**कहै बनानाथ माया सब त्यागी, गुरु शरणे आयो बड़भागी ।।5 ।।**

करड़ो=कठिन, दुस्तर, दुष्प्राप्य, दुष्कर। ओलखाई= पहिचान, लखता, ओलखाण। बड़भागी=भाग्यवान, भाग्यशील, भाग्यशाली, पूण्यवान।

*भावार्थ*– यह काया गढ़ (शरीर दुर्ग) मानवाकार महा दुस्तर एवं दुष्कर-दुष्प्राप्य है। ज्ञात-अज्ञात अनन्त पुण्यों से अर्थात् अहेतुकी ईश्वर कृपा से सर्व साधन सुलभता का धाम नर-तन इस जीव को मिला है। केवल कर्म बन्धन की निवृत्ति अर्थात् मोहान्धकार (अज्ञान तमस) की अविद्या रात्रि में जागृति पाकर संशय रहित ज्ञान प्रकाश में होकर विवेकवान सन्त जन इस प्राण-पुरुष की पहिचान करते है।

स्वामी बनानाथजी कथन करते है कि संसार की भौतिकता में लीली (माता-पिता, भाई-बन्धु, पुत्र-स्त्री इत्यादि) एवं सूकी (धन-सम्पत्ति, महल-मकान, जमीन-जायदाद का ऐश्वर्य) मायासमूह को त्याग कर परलोक वासना से विरक्त (वैराग्यवान) होकर बड़ा भाग्यशाली जीव सद्गुरु की शरण में आया। भाग्यवान् प्राणी ही सद्गुरु शरणापन्न होता है।

## *सतगुरु शरणागत प्रार्थना*

**सतगुरु सुनो विनती हमारी, तुम समर्थ मैं शरण तुम्हारी।**
**काया गढ का भेद बतावो, संशय शोक भ्रम को ढावो ॥6॥**

*शब्दार्थ*– **समर्थ**=जिस में परम कार्य करने की सामर्थ्य या शक्ति हो, अन्य पदार्थों-कामों आदि पर अपना प्रभाव डालने की शक्ति रखने वाला, सतगुरु, स्वामी, प्रभुत्व सम्पन्न प्रभु। **संशय**=ऐसा ज्ञान जिस में पूरा निश्चय न हो, सन्देह, शंका, शुबहा, आशंका, डर, भय। प्रमाणगत एवं प्रमेयगत द्विभाति संशय की असम्भावना स्थिति। **शोक**=प्रिय व्यक्ति की मृत्यु या वियोग से अथवा दुःखदायी घटना के कारण मन में होने वाला परम कष्ट, सोंग, गम। **भ्रम**=मिथ्या ज्ञान, धोखा, भ्रान्ति कारक, अविद्या सहित सामग्री का उपादान, चिदाभास की सात अवस्था का एक परिणाम-स्वरूप। **भेद**=विवरण, ब्यौरा, परिचय, रहस्य, रीति-नीति का उपादान।

*भावार्थ*– मुमुक्षू (उत्तम जिज्ञासु) सतगुरु के सम्मुख आकर आर्त भाव से विनय करता है। हे गुरुदेव ! हमारी प्रार्थना सुनो, आप परम समर्थ है, मैं भव-भय से भयभीत आपकी शरण में हूँ। अब आप ही हमारी आत्म रक्षा करो। इस कायागढ़

का विवरण सहित रहस्य कथन करके कहो, जिस से हमारे अन्तःकरण का समुचित संशय एवं शोक सहित अन्तःसंशय या अन्तर्भ्रम अथवा अन्तर्भ्रान्ति की निवृति कर दो।

सतगुरु महाराज की कृपा से परम बोध तत्त्व की प्राप्ति होने के बाद अज्ञानानुवृतिक भावुक भक्तों को अपने अनुभव से अवगत करवाते हुए तत्त्वदर्शी जन सन्त कथन करते हैं।

**सतगुरु दीनदयालू ऐसा, भेष विवेक दिया है जैसा।**
**जाकी विगत कहूँ समझाई, याने रती फरक नही काई ॥7॥**

*शब्दार्थ*– **दीनदयाल**=दीनों पर दया करने वाला, कृपासागर। **भेष (भेद)**=वेष, भेश, वस्त्रादि पहनने का ढंग, पहन के वस्त्र, पोशाक, मन्त्र-साधना, पंच संस्कार क्रिया के वेष सहित भेद, अन्तर्भेद, ज्ञान फकीरी का भेष-भेद। **विवेक**=सत्यासत्य के सोचने-समझने की शक्ति या ज्ञान, सत्यज्ञान, विचार सहित वैराग्य-षट्सम्पति सहित मुमुक्षू। **विगत**=चर्चा, विवरणिका, ब्यौरा सहित परिचय तालिका, विवरण। **समझाई**=विवरण सहित परिचय, समझा कर के। **यामे**=इस में। **रती**=रंचमात्र, रति, कम, अल्प, थोडी, जरा भी, रत्तीभर। **फरक**=पार्थक्य, अलगाव, दूरी, भेद, अन्तर,

कमी, कसर, दुराव। **काई**=रंचमात्र भी, किसी प्रकार का भी, कोई भी।

*भावार्थ–* मुमुक्षू की विनय-प्रार्थना स्वीकार करके दीन दयाल सतगुरु देव ने अन्तर्भेष का अन्तर्भेद विचार सहित जो कुछ दिया और जैसा समझ कर प्राप्त किया। उनकी सम्पन्न विगत व्योरे सहित विवरणिका समझा कर कहता हूँ, इस में रञ्चमात्र भी कोई अन्तर्भेद नहीं रखूँगा।

**श्वास उश्वास सुमिरणा सारी, दृढ़ आसन कर ममता मारी।**
**भेद विभूति विचार चढाई, अनुभव बात अगम की पाई।।8।।**

*शब्दार्थ–* **श्वास-उश्वास**=नाभि से नाक तक, इडा-पिंगला नासिका छिद्रों से श्वास (रात-दिन में 21,600) लेने की क्रिया। जो पुरक, कुम्भक, रेचक द्वारा सिद्ध-साधन किया जाता है। अष्ट-कुम्भक-प्राणायाम निम्न हैं –

**सूर्यभेदनमुज्जायी सीत्कारी शीतली तथा।**
**भस्त्रिका भ्रामरी मूर्च्छा प्लाविनीत्यष्टकुंभका।।**

(हठयोग प्रदीपिका 2/44)

(1) सूर्य भेदन, (2) उज्जायी, (3) सीत्कारी, (4) शीतली, (5) भस्त्रिका, (6) भ्रामरी, (7) मूर्च्छा,

(8) प्लाविनी, ये आठ प्रकार के कुम्भक प्राणायाम हैं।

**ममता**=अपना समझने का (मेरा-तेरा) ममत्वभाव, गर्व-मोह युक्त अविद्या। **भेद**=भीतर छुपे हुए रहस्य की बात का मर्म, तात्पर्य, प्रकार, अन्तर। **विभूति**=अंग पर लगाने की या धूणे की राख (भस्म), लक्ष्मी, ऐश्वर्य। **अगम**=जहाँ कोई जा न सके या जिसे कोई न जाण सके, दुर्गम, गहन, विकट, कठिन, दुर्लभ, दुर्बोध, बुद्धि से परे, अथाह, गहरा, षट्दर्शन शास्त्र। प्राणायाम –

**रेचकः पूरकश्चैव कुम्भकः प्रणवात्मकः।**
**प्राणायामो भवेत् त्रैधा मात्रा द्वादश संयुतः॥**

(गोरख संहिता 2/2)

*भावार्थ*– हठयोग सहित मन्त्रयोग में प्रणव साधन करते हुए श्वास-उश्वास में साधारण, उपांसु, मानस का क्रमशः स्मरण (सुमिरण) का पुरक, कुम्भक, रेचकता से विधि संयुक्त साधन सार किया। सिद्धासन-पद्मासन अर्थात् आसन दृढ़ (अहार-निद्रा दृढ़ सहित) अन्तर्कामिना (वासना सहित इच्छा) को दमन करके उल्टकर अन्तर्भाव में लाया।

भेद की विभूति (भस्मी) को ज्ञान गरिमा की तितिक्षा

एवं उपरामता सहित विचार पूर्वक धारण (चढ़ाई) की, तब साधन प्रयोग द्वारा प्राप्त ज्ञान अर्थात् दुर्गम बात को सुगमता से प्राप्त की गई।

**उनमुनि मुद्रा श्रवण सारी, ऐसे योगी जरणा जारी।**
**मेहर मेखला तत की टोपी, दया करी गुरु सिर पर ओपी ।।9 ।।**

*शब्दार्थ–* **उनमुन(उन्मुनि)**=हठयोग की एक मुद्रा विशेष, जिस का स्थान मूर्द्धनी (तालू) है, जिस में सुधारस चवता (सरता) टपकता रहता है। जिस से शरीर के रस-पाचन होते है। योगी जन जिभ्या उलट कर अमृत पान करते है और भोगीजन स्पर्श में खो देते है।

**मुद्रा**=1.खेचरी (जिभ्या), 2. भूचरी (नासा), 3. चौंचरी (चक्षु), 4. अगोचरी (श्रवण), 5. उन्मुनी (दसवां द्वार-मूर्द्धनी)। प्राचीन काल से अध्यात्म व आगम साधना में मुद्राओं का विशेष महत्त्व है। जिस प्रकार शारीरिक-तन-मन्त्र, मन-मंत्र तथा कोशिकाएं मिलकर एक पूर्ण शरीर की रचना करते हैं, उसी प्रकार साधना में भगवान का विग्रह-यंत्र उनके सामने मंत्र की उपासना तथा उस पर दिखाई गई मुद्रा तंत्र कहलाती है। इन तीनों के मिलने से साधना सफल होती

है। मुद्राओं से हर प्रकार की यन्त्र, मन्त्र एवं तन्त्र क्रिया पूजन को पूर्णता प्रदान करती है।

**मोदनात सर्व देवानां द्रावणात पाप सन्ततेः।**
**तस्मान्मुद्रेति सा ख्याता सर्व काम प्रसाधिनी॥**

अर्थात् पूजन में मुद्रा सभी देवताओं को प्रसन्न करके पापों का क्षय करती है।

मुद्रा एक रहस्यमय प्रक्रिया है, जिसमें समस्त देवताओं का पूजन बिना सामग्री के भी किया सकता है। आगम ग्रंथों में सभी देवताओं के पूजन में छः मुद्राओं का वर्णन है। जो 1.सुमुखी, 2.आह्वानी, 3. आसन, 4. स्थापनी, 5. अधोमुखी तथा 6. प्रार्थना है। इन मुद्राओं का विस्तृत विवरण तंत्र शास्त्र के प्रमुख ग्रंथ, जैसे-शारदा तिलक, दश महाविद्या तथा देव साधना में बताया गया है। सनातन आर्यावृत (हिन्दू) समाज में प्रमुख (शैव, वैष्णव तथा शाक्त) तीनों संप्रदायओं में मुद्राओं का प्रयोग पाया जाता है।

**शैव**– इस में भगवान शंकर की लिंग मुद्रा की जाती है। यह मुद्रा साधक को भगवान शंकर का सायुष्य प्राप्त कराती है। इस मुद्रा के द्वारा साधन शिव के सान्निध्य की कामना

करता है। भगवान् शंकर से लक्ष्मी की कामना के लिए लिंग मुद्रा को सिर पर, राज्य तथा प्रभुत्व, धन संपति की कामना वाले नेत्रों पर, अन्न व धन की इच्छा के लिए मुख पर, रोगों का दमन व शांति के लिए ग्रीवा पर, सब प्रकार के सुख की कामना के लिए हृदय पर तथा ज्ञान की प्राप्ति के लिए नाभि मंडल पर, यह मुद्रा की जाती है। लेकिन शिव के पांच अलग-अलग रूपों की मुद्राऐं भी अलग-अलग हैं। शिव के पांच रूप में प्रथम रूप 'सद्योजात' में धनुष बाण की मुद्रा, द्वितीय 'वामदेव' रूप को पद्‌म (कमल) की मुद्रा, तृतीय 'अघोर' रूप को ज्ञान मुद्रा, चतुर्थ 'तत्पुरुषाय' रूप को कवच मुद्रा तथा पंचम 'ईशान' रूप को महामुद्रा (व्यापक) की जाती है।

**वैष्णव–** वैष्णव संप्रदाय में भगवान विष्णु की उपासना की जाती है। जिसमें भगवान विष्णु को शंख, मुद्रा, चक्र मुद्रा, गदा, पद्‌म, वेणु, ब्रीवत्सु, कौस्तुभ, वनमाला, ज्ञान, बिल्व, गरुड़, परा, नारसिंही, वाराही, ह्यग्रेवी, धनु बाण, परशु तथा जगन्मोहिनी आदि 19 प्रकार की मुद्राएं होती हैं।

**शाक्त–** इसमें शक्ति के रूपों की पूजा की जाती है। इसमें शक्ति माँ दुर्गा को पाश, अंकुश, वर, अभय, खड्ग, चर्म,

धनु, शर, मुषली तथा मुद्रिका में दस मुद्राएं शक्ति की प्रिय दौग्रीं मुद्राएं हैं।. मां लक्ष्मी के पूजन में अक्षमाला, वीणा, व्याख्या तथा पुस्तक मुद्रायें अतिप्रिय हैं। महायोनि मुद्रा सर्व प्रकार की सिद्धियों के लिए की जाती है। सतयुग से वर्तमान तक ऋषि-मुनि, संन्यासी मां राज राजेश्वरी, जिसे त्रिपुरा सुंदरी भी कहते आए हैं, यह भी विद्या आर्थात् श्री यंत्र की अधिष्ठात्री देवी है। इसमें श्री यंत्र का संक्षोमिणी, पूजा करने के बाद निम्न दस मुद्राएं दिखाई जाती हैं। जो संविद्राविणी, आकर्षिणी, वश्यकरी, उन्मादिनी, महाकुशा, खेचरी, बीज, योनि तथा त्रिखण्डा आदि प्रमुख है।

मनुष्य रूप में श्री विद्या के प्रथम उपासक महर्षि अगस्त्य के अनुसार देव के आह्वान के लिए आह्वान मुद्रा की जाती है। इसमें दोनों हाथों से अंजलि बांध कर दोनों अगूठों को अपनीह अनामिकाओं के मूल पर्वों पर लगाया जाता है। इसी मुद्रा का अधोमुख कर देने पर स्थापनी मुद्रा बन जाती है। दोनों हाथों में मुट्ठी बांध कर दोनों अंगूठों को ऊपर खड़ा कर देने पर सन्निधापिनी मुद्रा की जाती है। दोनों अंगूठों को दोनों मुट्ठियों के भीतर रखकर उन्हें उलटा कर देने पर संबोधिनी मुद्रा तथा

इन्हें सीधा करने पर सम्मुखीकरण मुद्रा बनती है। इन्हें पूजन में नियमित रूप से करने से भगवत कृपा तथा मनोवाछिंत फल प्राप्त होता है। किन्तु योग-क्रिया में पंचमुद्रा का साधन ही सर्वोपरि प्रधान माना गया है।

**ओपी**=ओपित, महिमा मण्डित हुई, सुहावनी लगी। **जरणा**=कृपा, दया, अनुग्रह, महर। **मेहर**=कृपा, दया, अनुग्रह, महर। **मेखला**=करधनी, किंकिणी, तगडी, अथवा वह कपड़ा जो साधु लोग गले में डाले रहते है, कफनी, अलफी, किसी वस्तु को मध्यभाग (चारों ओर से घेरने) वाली छोरी। एक प्रकार की रस्सी जो नाथ आदि सन्यासी जन कमर के चारों ओर बान्धते है। नाद-जनेऊ।

*भावार्थ*– पंच योगमुद्रा साधन प्रणाली में अगोचरी (श्रवण) को सार सम्भाल कर उन्मुन (दशवाँ) तक पहुँचने में विधैय पूर्वक जरणा के धैर्य को धारण किया। शनैःशनै साधना पथ चलने में सतगुरु की महर मेखला-तत्व की सर्वोपरि सिरोधार्य टोपी से सोभा हुई। सद्गुरु की कृपा से तत्त्व टोपी उत्तमांग शीश पर सुहावन रूप से ओपित हुई।

आगे ज्ञान योग पूर्वक कर्म योग की पंच मात्रा में ज्ञान

फकीरी भेष का कथन करते हैं।

**शृँगी शब्द सुरत की सेली, गुरु प्रताप सिरपर मेली।**
**करणी कुतक सबर की झोली, शम दम साधन लिया विरोली ।।10 ।।**

*शब्दार्थ–* **शृँगी**=नाद, शब्द ध्वनि यन्त्र में काली ऊन की बनी जनेऊ के सिरे में बन्धी होती है, जो भोजन–भण्डारे या आशिर्वाद देते समय बजाई जाती है, यह सम्प्रदाय की पहिचान भी है, सन्ध्या-पूजा में सार्थक कही जाती है, यह पवित्री में पिरोकर डालते है। **सेली**=जो कि गले में पहनने का साढे बारह हाथ का होता है, शीश पर बान्धने का पन्द्रह सौ हाथ का होता है। नाथ पंथी साधु के गले में काली ऊन से बनाई जनेऊ पहनी जाती है। जनेऊ-साढे बारह हाथ का-भेड़ की ऊन से निर्मित होती है अर्थात् नाद-जनेऊ। **कुतका**= कुतका, आसा अथवा वैरागण जो साधक योगियों के बैठने में आसन की सुविधा में सहायक है।

*भावार्थ–* परम वैराग्यावस्था की ज्ञान फकीरी में गुरु शब्द प्रणव की शृँगी, सुरत की सैली को सतगुरु की कृपा (प्रसाद) से शिरोधार्य करके पहनी, करणी-रहणी (साधन) का आश्रय (कुतका), सबर की झोली लेकर शम (इन्द्रिय संयम), दम

(मन का निरोध) साधन द्वारा खोज (विरोली) कर जांचा और धारण किया।

**सोहं शब्द दिया गुरु भारी, भेष लिया हम ब्रह्म विचारी।**
**चित चाकरी चेतन वैणा, काया नगरी में फेरी देणा॥11॥**

*शब्दार्थ*— **सोहं**=शिवोऽहं, सोहम्, हंसो का पलटवार सोहं, योगी का ज्ञान प्रणव साधन। **भारी**=वजनदार, विधि सहित गौरव शील, प्रमुख। **भेष**=ज्ञान फकीरी की पहिचान। **ब्रह्म विचारी**=अन्तर्विचार के अन्तर्भेद से। **चाकरी**=नौकरी, सेवा, टहल, दासता, श्रद्धा कार्य। **चेतन**=सावधान, सक्रिय, दत्तचित, साधन रत। **वैणा**=चलना, बहना, पालन करना, धारण करना, रहना। **काया नगरी**=शरीर, सेवा, टहल, दासता, श्रद्धा कार्य।

*भावार्थ*—सतगुरु स्वामी ने शिवोऽहं (सोऽहम्) सोहं (वह परमात्मा मैं हूँ) का योगिक प्रणव शब्द दिया। वह अन्तर्मन में विचार पूर्वक चिन्तन करके हमने धारण किया। यही अन्तर्भेष (उपराम सहित तितिक्षा एवं वैराग्य) को विवेक द्वारा लिया अर्थात् धारण किया।

अन्तर्मना चित्त चेतन की सेवा (चिन्तन) में सावधान

होकर चलना। इस प्रकार काया के नगर में परिक्रमा (अर्ध-उर्द्ध) देकर प्राण शोद्धन द्वारा मन सहित सुरत एवं शब्द को प्राण गत मिलाया।

*योगी के ओम ज्ञानी के सोहम्, भक्त ही राम बतायगा रे।*
*समझया जके एक कर जाने, तोको निज समझायगा रे।।*

(वाणी प्रकाश, हरिराम वैरागी 6/4)

**शब्द गुरु का सैल सम्भाया, होय सूरा रण भीतर आया।**
**मन को पकड़ घेर घर लाया, बनानाथ यह योग कमाया ।।12।।**

*शब्दार्थ*– **सैल**=शैल, कठोर पत्थरीला चट्टान, एक प्रकार का शस्त्र। **सम्भाया**=धारण किया, सावधानी पूर्वक उद्दत भाव से लिया। **घेर**=चारों ओर की सीमा या परिधि का घेरा लगा कर, किसी को घेर कर मार्ग बन्द करना।

त्रिबन्ध–(1) उड्डियान बन्ध– इसके साधन से मनुष्य मृत्युंजय होता है। पेट को अन्दर खैंच कर नाभि को आकर्षित करना। (2) मूल बन्ध– गुदा और योनि (लिंग) सम्बन्धी सब रोग नाश होते है। अश्वक्रिया से गुदा को अन्दर खींचना। (3) जालन्धर बन्ध– साधना से शरीर के सभी रोग नष्ट होते हैं। कंठ को आकुंचन करके हृदय के समीप लाना। समस्त

योग साधना जानने के लिये स्वामी अचलरामजी द्वारा लिखित 'सन्ध्या विज्ञान' अवश्य पढ़े।

*भावार्थ*— सद्गुरु द्वारा प्राप्त प्रणव शब्द (प्रणव बीज मन्त्र) का सेल शस्त्र दत्तचित होकर धारण किया और मनोबल साधन बल, गुरुबल साधकर सावधान हुआ। इस प्रकार काया गढ की रणभूमि (साधना) के प्रांगण (क्षेत्र) में पहुँचा।

मन को विषय विमुख (घर) कर के अपनी निश्चय स्थिरता के स्वरूप घर में ले आया। स्वामी बनानाथ जी महाराज कथन करते है कि इस प्रकार निर्बन्धन रूप से स्वतन्त्रतापूर्वक यह योग साधन 'योगश्चिवृत्तिनिरोध' किया अर्थात् कमाया।

| | | |
|---|---|---|
| क्षर | अक्षर | निक्षर |
| अपर ब्रह्म | शब्दब्रह्म | पर ब्रह्म |
| चिदाभास | कूटस्थ | ब्रह्म |
| जीव | ईश्वर | चेतन |
| स्थूल | सूक्ष्म | कारण |
| प्रकृति (माया) | जीव-ईश्वर | प्रमा चेतन |
| सगुण | निगुण | गुणातीत |
| वाच्य | लक्ष्य | अवाच्य |

इनका निर्णय प्रमा एवं अप्रमा की यथार्थ तथा अयथार्थ क्रिया द्वारा जान कर निश्चयतापूर्वक आगे बढ़ा। इन्हें गीता के आठवें अध्याय में भगवान ने छः भेद बताये हैं।

अपरा परा अहम् –गीता 7/5-6।

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ माम् –13/1-2

क्षर अक्षर पुरुषोत्तम –15/16-17

अपरा क्रिया, पदार्थ, परा-सामान्य जीव।

कारक पुरुष, अहम् (निर्गण-सगुण)।

इन भेदों को दृष्टान्त के रूप में इस प्रकार समझना चाहिए कि जल तत्त्व एक होने पर भी छः भेद से प्रतीत होता हैं —

1. परमाणु के रूप से जल निर्गुण ब्रह्म है।
2. भाप के रूप से जल सगुण परमात्मा है।
3. बादल के रूप से जल कारक पुरुष (ब्रह्म) है।
4. बूँदों के रूप से जल सामान्य जीव है।
5. वर्षा के रूप से जल सृष्टि-रचना रूप क्रिया है।
6. बर्फ के रूप से जल से पंच तत्त्व की गणना में पदार्थ स्वरूप है।

**कठिन योग है पन्थ करारा, बहना महा खड्ग की धारा।**
**सब दल छेद हटे कभी नाही, सूर वीर छाजे दल माही ॥13॥**

*शब्दार्थ*– **करारा**=कठिन, दुष्कर, दुस्तर, विकट, दुःसाध्य, कठिनोत्तर कठिन। **बहना**=चलना, जीवन की दैनिक साधना की निरन्तर क्रिया करना। **खड्ग**=दुःधारी तलवार, खाण्डा। **छाजे**=सोभित होता है। **दल**=सेना, झुण्ड, गिरोह, फोज, समूह। **छेद**=भेदन करके आगे बढना।

*भावार्थ*– यह कर्मयोग के अष्टांग (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और संप्रज्ञात-सविकल्प एवं असंप्रज्ञात 'निर्विकल्प समाधि) के अन्तर्गत पूरकादि सहित षट्कर्म की साधना का मार्ग (पंथ) महा दुष्कर ही नहीं अपितु दुःसाध्य है। इस पथ पर जीवन-साधन करके चलना तलवार की धार पर चलने के समान दुस्तर है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, ईर्षा, द्वेषादि की सेना का छेदन-भेदन करने में जो योग-साधक कभी हट कर विमुख नहीं होता अर्थात् पीठ दिखा कर (मनोमालिन्य) हार कभी नहीं माने। ऐसे साधननिष्ठ मनैन्द्रियजीत (शूरवीर) की रणांगण सेना के बीच शोभा होती है।

**प्रथम जाय नाभि को हेरी, सतगुरु शब्द लगाई फेरी।**
**जासे फुरे कामना सारी, अति अपरबल नागिन नारी॥14॥**

*शब्दार्थ–* हेरी=देखी, पुकार, टेर, लगाई, खोज की। **फेरी**=चारों ओर घूमने की क्रिया, चक्कर, परिक्रमण, आवर्त करना। **फुरे**=स्फुटित या प्रकाशित होना, संकल्पित, संस्मरण, उच्चरित होना। **कामना**=काम की इच्छित वासना। काम का सीधा अर्थ वासनाओं की गतिविधियों से लगाया जाता है। 'काम' शब्द न केवल वासना का प्रतीक है और न इन्द्रिय भोग का, वास्तव में काम साक्षात ब्रह्म का अंग है। काम की सत्ता को ईश्वर की विभूति माना गया है। अव्यक्त परमब्रह्म ने जब अपने को व्यक्त करने का निर्णय किया तो सबसे पहले उसने 'काम' का सृजन किया। काम की अपनी कोई आकृति नहीं है। कभी यह धर्म है, कभी अर्थ, कभी मोक्ष। लौकिक जीवन में जिस प्रकार धर्म और अर्थ पुरुषार्थ के साधन हैं, उसी प्रकार काम भी लोक यात्रा में सहायक है। विकास, समृद्धि, ऐश्वर्य का मुख्य साधन काम है। यदि कामना ही नहीं होगी तो सृष्टि निर्माण भी नहीं होगा। यदि सृष्टि ही नहीं होगी तो धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष का कोई औचित्य ही नहीं रह

जाता। वह तो विधाता के अधीन है, इसलिए जब तक काम अनुशासन में है, तब तक सृष्टिकारक और सृजनात्मक होता है, लेकिन जिस क्षण वह अनुशासन विहीन हो जाता है, उसी क्षण कामना वासना में परिवर्तित हो जाती है। ऐसी कामना ही दुःखों का मूल है। कामना को सत्यरूपी अनुशासन से युक्त रखना ही पुरुषार्थ है, इसलिए काम एक शस्त्र है, जो बुराइयों को काटने के काम आएगा और गलत उपयोग पर हमको ही काट देगा। **अपरबल**=अति बलवान, उद्धत, बलशाली। **नागिनी**=नागिन, साँप की मादा, नाभि मण्डल में एक नाड़ी होती है।

*मेदःश्लेष्माधिकः पूर्वंष्टकर्माणि समाचेरत्।*
*अन्यस्तु नाचरितानि दोषाणां समभावतः॥*
*धौतिबस्तिरस्तथा नेतिस्त्राटकं नौलिकं तथा।*
*कपाल भातिश्चेतानि षट्कर्माणि प्रचक्षते॥*

(हठयोग प्रदीपिका 2/21-22)

*भावार्थ*– इस प्रकार हठयोग एवं मन्त्रयोग के संगम में सर्व प्रथम मणिपुर चक्र के नाभि स्थान का परीक्षण किया और सतगुरु द्वारा प्राप्त प्रणव शब्द का चक्रावर्त फेरा लगाया।

जिस नाभि गत चक्र द्वारा मनोवृत्ति की समस्त कामनाऐं संस्फुरित-होकर संकल्पित सक्रिय होती है। जहाँ पर अति अपरबल (उद्धत बलशाली) नागिन (नाड़ी के रूप में चक्रावर्त) है।

**नाभि नगर नागनी जागी, जाको देख सकल जग भागी।**
**उस नागन ने सब जग खाया, जां सतगुरु पूरा नहीं पाया ।।15 ।।**

*शब्दार्थ*– **नागनी**=मोहशक्ति, अविद्या, ममत्ववृति, नाभि प्रदेश में एक नाड़ी है, जिस का नाम योगिक भाषा में नागिन या नागनी कहते है। जो साढ़े तीन आंटें लपेट कर बनी है, जिन का मुख सदैव हृदयोन्मुख ऊपर रहता है। मूर्द्धनी द्वार से चवते स्रवते झरते अमृत बूँद को पीकर जीवित सजीव रह कर कामोद्दीपन करती है। योगी पुरुष षट्क्रियाओं सहित पूरक, अष्ठकुम्भक, रेचक करते हुए प्राणायाम एवं पंच मुद्राओं के साथ वज्रोली इत्यादि अष्ठ योग साधना द्वारा नागिन का मुख पलट कर अर्धोन्मुख करते है। इस से काम शक्ति निष्क्रिय-अशक्त होती है और वह ऊर्द्धद्वार मूर्द्धनी से स्रवते सुधारस को खेचरी मुद्रा द्वारा पीकर अमरत्व प्राप्त करते हैं। यह नाड़ी नागनिनुमा की होने से इसे नागिन के नाम से योगिजन कथन

करते या जानते है, जो सारे जीवों को मृत्योन्मुख करती है।

*भावार्थ*– नाभि प्रदेश में सद्गुरु द्वारा शक्तिपात होने पर हठ-मन्त्र साधना से नागिन नाड़ी जाग्रत हुई। जिस को देख कर अर्थात् प्रक्रिया का स्वरूप जान कर सारा संसार अचम्भित (चकित) स्तम्भित होता है। उस की भयंकर फुंफकार भरी क्रिया के आगे सारा संसार नतमस्तक हार मान कर लख चौरासी का पथ प्रयाण करके आवागमन में भाग रहा है। इस नागिन (शक्ति नाड़ी) ने समस्त संसार का अवगाहन किया अर्थात् भक्षण-मंथन कर दिया कि-जिस किसी ने ब्रह्मनिष्ठ-ब्रह्मश्रौत्रिय योग इष्ट सतगुरु नही पाया, वे सब हारते गये।

नाभिगत नागिन नाड़ी को उन्मनि का स्रवित सुधारस मिलता है, जो वीर्यवहन नाड़ी द्वारा गृहस्थ भोग में वहन (व्यर्थ व्यय) होता है और वही नागिन नाड़ी के उलटने से उन्मनि (मुर्द्धनी) से स्रवित सुधा योगीजन-ज्ञान साधक खेचरी मुद्रा द्वारा सुधा पान करके अमरत्व प्राप्त करता है।

**उस नागिन को मारे कोई, जाके धड़ पर शीश न होई।**
**नागिन मार नगर सब हेरा, उलटा प्राण पश्चिम को फेरा ॥16॥**

*शब्दार्थ*– **नागिन**=नागिन नाड़ी को साधना द्वारा उर्ध्व से अधोमुख पलटना ही मारना कहा गया है, जिसे वही सतगुरु शरणागत साधक गर्व रहित, तन-मन-धन के मिथ्यात्व ज्ञान को प्राप्त करता है, वही मारने वाला कोई होता है। जो कोई साधक ही मार सकता है।

*भावार्थ*– कोई योगनिष्ठ गुरु ज्ञान ज्ञाता जन उस नाड़ी नागनि पर अपना शक्तिपात करके उसे निर्बल निस्तेज कर दे। ऐसा कोई सतगुरु का वही बालक मार-टार सकता है कि जिस साधक के तन-मन वाणी सतगुरु पर न्योछावर हो और अष्ठ मदान्कृत (विद्या, जोभन, जाति, धन, प्रभुता, रूप, कुल गर्व) सहित समस्त दोष-दुर्गुण अर्थात् व्यशन नशादि शरीर पर नही हो।

साधक योग निष्ठ स्वामी बनानाथ जी कथन करते है कि हमने साधन सबलता से उस नागिन को मार (बदल) कर इस शरीर के सारे नगर को अन्दर (सूक्ष्म) एवं बाहिर (स्थूल) से निरीक्षण किया और अपने प्राणों की गति को पश्चिम की दिशा (पीठ की सुमेरु जिसमें इक्कीस दाने (पर्वत) गांठें हैं) में चक्रावृत करके परिक्रमा में फिराया।

**नाभि कमल चेतन की चोकी, उठती लहर उपजती रोकी।**
**ऐसे चला पश्चिम की घाटी, गाँठ इक्कीसों मेरू की फाटी ॥17॥**

*शब्दार्थ–* **उठती**=चढती-बढती, उबलती-उछलती सक्रिय होती कामना। **लहर**=तरंग, हिलोर, मौज, प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न उफान। **उपजती**=उत्पन्न होती, संकल्पित या संस्फुरित होते ही।

*भावार्थ–* तत्समय तात्कालिक नाभि कमल (मणिपूरक चक्र) में चेतना धारक चेतन की चौकी (पहरेदारी) है। जो अन्तर्मन में संकल्पित संस्फुरणा का संस्मरण करता है। उस उबलकर उत्पन्न होती मनोवेदना की धारा को वहीं उठते संस्फुरण में ही रोक दी।

इस प्रकार निश्चल एवं निर्भयता से साधन रत पश्चिम की घाटी में प्राण वहन करके चला। सुरत ने शब्द सैल से शब्द वेध द्वारा मेरु मण्डल (समेरु) की इक्कीसों गाठों का भेदन किया और प्राणों का उत्सर्ग-निर्गमन हुआ।

**बंकनाल भँवरा बह आया, उलटा कमल अमी वर्षाया।**
**झिलमिल ज्योति युक्ति से जागी, चेतन चला शिखर घर पागी ॥18॥**

शब्दार्थ– **बंकनाल**=बंकनाल भेद से दो तरह की मानी

गई है, युक्त बंक–जो रीढ की हड्डी (मेरुदण्ड) ऊपर मस्तिष्क से जुड़ती है और मुक्तबंक–जहाँ सिर से रीढ़ की हड्डी (मेरुदण्ड) बहती हुई नीचे कमर के जोड़ से जुड़ती है, वहाँ इति है।इस तरह मुक्तबंक मस्तिष्क सिरा को लांघते हुए नासा की सिरा से जुड़ती है, यह मुक्तबंक (त्रिवेणी) है और जहाँ नाभि के पृष्ट भाग से बहंकर इति हो वह मुक्तबंक (त्रिवेणी) है। योगी जन मेरू दण्ड भेदन करके युक्त और मुक्त से साधन-सिद्धि प्राप्त करते है। **शिखर घर**=सब से ऊँचा चोटी मस्तिष्क का ऊपरी सिरा जिसे योग क्रिया की भाषा में गगन मण्डल (जिसके अन्तर्गत त्रिकुटी, युक्त त्रिवेणी-मुक्त त्रिवेणी, भ्रकूटी, भ्रमर गुफा, सोवन शिषर) दशवां द्वार कहा गया है।

*भावार्थ*–स्वामी बनानथ जी कथन करते है कि इस प्रकार मन-पवन (प्राण) चल कर (साधनरत) मेरुस्थान (इक्कीस मेरु) की बंकनाल में आया। तत्समय उन्मुनि स्थान मुर्द्धनी के उल्टे कमल (ताल) से सुधामृत की वर्षा बूँदे बहती पाई।

आगे त्रिकूटी-भ्रकूटी स्थान में अखण्ड ज्योति (बगैर दीपक-तेल, बाती) के दर्शन हुए, जो झिल मिल-टिमटिमाती युक्ति पूर्वक जगी-लगी। चेतन जीवात्मा (मन, प्राण, सुरत,

शब्द के साथ साधन रत सोवन शिषर घर के रास्ते चला।

*(इन्दव छन्द)*

*प्राण-अपान को नाभि में वास जु, अन्तर्भेद में रहत है न्यारा।*
*प्राण-अपान में जाय मिले तब, योग सिद्धि पद पावत प्यारा॥*
*प्राण-अपान जो भिन्न होवे जब, च्युत स्थान ते मृत्यु पुकारा।*
*'रामप्रकाश' ये प्राण ही आत्म, सूक्ष्म देह ले जावत सारा॥*

*भावार्थ–* प्राण ओर अपान का अलगाव लिये नाभि में निवास है, प्राणायाम द्वारा प्राण ऊर्द्ध से अर्ध होते अपान से मिलने पर देह शुद्धि के साथ योग सिद्धि की प्राप्ति होती है। प्राण-अपान के नाभि स्थान को त्याग कर बहिर्गमन होते ही स्थुल देह पात हो जाता है, तब प्राण सूक्ष्म शरीर के सत्रह तत्व सामग्री को लेकर परलोक सिधार जाते है अर्थात् प्राण ही अपने सोलह साथियों को साथ ले उड़ता है। वेदान्त में यही चिदाभास-कूटस्थ चेतन आत्म 'ब्रह्म' है।

*(इन्दव छन्द)*

*प्राण को पीवत युग युग जीवित, जिवित ओढ के मूँआ बिछावे।*
*प्राण को ऊर्ध रु ऊर्ध को साधत, पूरक कुम्भक रेचक ध्यावे।*

*इडा रु पिंगला सुषुमन शोधत, योग सिद्धि पद सहज ही पावे।*
*'उत्तमरामप्रकाश' पुकारत, प्राण को साधत ब्रह्म समावे॥*

**इडा पिंगला सुषुमन भेला, उलटा किया त्रिकूटी मेला।**
**त्रिकूटी महल झिलकत झांई, द्वादश नेजा फुरकत बांई॥19॥**

*शब्दार्थ–* **इडा**=गंगा, चन्द्र, वामनाड़ी, बाँया, *दृष्टव्य-'आध्यत्मिक सन्त वाणी शब्द कोष'*, 'सोहं च हकारं च जीवो जपति सर्वदा' इति श्रुति। **पिंगला**=यमुना, सूर्य, दक्षिण नाड़ी, दॉया, द्रष्टव्य-सन्त वाणी शब्द कोष 'सोहं सोऽहमिति प्रोक्तो मन्त्र योगःस उच्यते'। **सुषुम्ना**= सरस्वती, दोनों स्वर का बराबर चलना, देखे-*'उत्तम बाल योग रत्नावली'–उत्तम प्रकाशन जोधपुर।* **त्रिकूटी**=दोनों भँव के बीच, ललाट में तिलक स्थान, भृकुटी, गंगा-यमुना-सरस्वती (इडा, पिंगला, सुषुम्ना) का मिलना। **द्वादश**=पूरक में अकार का स्मरण पूर्वक 12 प्रणव जप करते कुम्भक में उकार ध्यान पूर्वक 16 प्रणव का जप, मकार के चिन्तन में 10 प्रणव का रेचक करना एक प्राणायाम है, यह प्रणवोपासना का एक्य चिन्तन गूढ रहस्य है अथवा नाभि से बाहिर होता नाक के बाहर तक द्वादश अंगुल प्राण निकलता है, उसे प्राणायाम कुम्भक क्रिया से घटाया गया।

*भावार्थ–* पूर्व प्राणायाम की साधना के प्रतिफल में इडा-पिंगला सहित सुषुम्ना की नाड़ियाँ उल्ट कर त्रिकूटी स्थान में मिल कर मेला किया। त्रिकूटी महल में ज्योति पुरुष के झलकते दर्शन हुए। वहीं प्रणव जप के द्वादश अंगुल श्वासा बहिर्गमन की ध्वजा (नेजा) फरकती दर्शित हुई है।

विशेष– स्वर साधना की गति (साधना) जानने के लिये पठनीय ग्रन्थ–(1) आध्यात्मिक सन्त वाणी शब्दकोष, (2) सन्ध्या विज्ञान, (3) अचलराम ग्रन्थावली भाग 2-3, (4) उत्तम बाल योग रत्नावली, पातंजल योगदर्शन इत्यादि।

**मन पवन मिल धीरज पाई, सहजे चला गगन घर जाई।**
**सुरत शब्द के मिट गया शंका, ऐसे लिया गगन घर बंका।।20।।**

*शब्दार्थ–* **मन-पवन**=मनन कर्ता मन एवं जीवन प्राण, मनोवृति सुरत-शब्द का मिलन होकर। **सहजे**=सरलता से, स्वाभाविकता से। **गगन**=दशवें की दिशा के लिये आगे जाने लगा। **सुरत**=सुध, ध्यान, याद, श्रवणेन्द्रिय की वृति, अन्तःकरण की स्मृति, मनोवृति, सुरता, बहिरंग चितवृति। **शब्द**=ध्वनि, आवाज, सार्थक ध्वनि, सन्तों के बनाये हुए पद, सतगुरु के माध्यम से जप-सुमिरण, स्मरण के लिये दिया

जाने वाला प्रणव, मन्त्र, गोपनीय सूत्र। **ऐसे लिया**= इस प्रकार से। **गगन घर**=उच्चस्तर वास, ऊपर का निवास स्थल।

*भावार्थ*–ऐसी नैष्ठिक साधना के परिमाण-प्रयोजन पाकर मन सहित प्राण धैर्य्य से सफलता पा सके। इस से आगे स्वाभाविक सहजता से जीवात्मा चला और गगन (सोवन शिषर) पर पहुँचा। मन एवं प्राण की गति सुरत और शब्द के साथ रहते यहाँ शब्द मय सुरत (वृति) प्राणगत मन के साथ लय होगई। तब सुरत शब्द की एकता से समुचित पूर्वाग्रह शंका की निवृति होगई। इस तरह से मन-पवन (प्राण) ने उच्च स्थान गगन घर की प्राप्ति में निश्चय किया।

**अनहद नाद वहाँ नित बाजे, झूँठ कहूँ तो सतगुरु लाजे।**
**बिना बादली वर्षा होती, शान्ति बून्द नित वर्षे मोती॥21॥**

*शब्दार्थ*– **अनहद नाद**=दोनों कान बन्द करने के बाद ध्यान मग्न होने पर कानों से आने वाली ध्वनि। ध्यान केन्द्र की सिद्धि होने पर गगन मण्डल-सोवन शिषर पर होने वाले दश प्रकार के बाजों की ध्वनि। यथा–घण्टा, शंख, वीणा, ताल, बंशी, मृदंग, भैरी, चिणचिणी, झिणझिणी, मेघ, इत्यादि के ध्वन्यात्मक शब्द। **शान्ति बून्द**=स्वाति नक्षत्र में होने वाली

वर्षा के समान सिद्धि-वृद्धि सर्वकाम सफलता की शान्ति जनक वर्षा की शूक्ष्म बून्द, जो उज्वल मोती के समान चमकता हुआ निर्विघ्न आनन्द की दर्शन-प्रतीति मोती है।

*भावार्थ*– मन-प्राण पुरुष (सतो अंश चेतन रूप) शब्दमय अनाहत (अनहद) के नित्य निष्कर्म-निष्प्रह निष्प्रपंच रूप से अनहद बाजे बजते है। इस तथ्य को यदि में मनोकल्पित अनघड़ी कहूँ तो सतगुरु की कही बात झूँठी तथा झूँठ कहूँ तो गुरु मुखि साधना के साधक सहित गुरु का अपमान होता है।

*रंरकार की लग रही, दशवें द्वारे टकोर।*
*सन्तदास अनहद की, होती है घन घोर।।*

(संतदास अनुभव विलास 11/85)

वहाँ बगैर बादल के वर्षा होती है, जिस में शान्ति जनक सुधामृत स्वाति बून्द के समान शब्द मोतीयों की वर्षा होती है। सतगुरु का प्रणव शब्द अक्षय अनन्त अपार अनादि है, जो मन-प्राण को चेतना देकर उसी में आप लय होकर एकता में परिणिती प्रदान करता है।

**करतल खेल रचा बहु भारी, बिना पाँव जहँ नाचत नारी।**
**टूँटा ताल बजावण लागा, गूँगा करे मुदरी में रागा ।।23।।**

*शब्दार्थ*– **करतल**=हाथ की हथेली, करगत, हाथ में आया हुआ, हस्तगत, प्रत्यक्ष। **खरतल**=खरा, स्पष्टवादी, शुद्ध, प्रचण्ड। **पाँव**=पैर, कदम, चरण, पाद।शुभ-अशुभ कर्म रूप पाँवों के बिना निष्कर्मा बुद्धि रूप नारी अनहद के गगन में नृत्य करके आनन्दित होती है। **टूँटा**=बगैर हाथ, हाथों के बिना। कर्तव्य-क्रिया शक्ति (हाथ) के बिना श्वासोश्वास की शब्द-साधन की ताल बजाने लगा हो।**गूँगा**=जो बोल न सके, मूक। वदन मूक, अज्ञान मूक, धर्ममूक, ज्ञान मूक, यह चारों तरह के गूँगे होते है। ज्ञान मूक अपने निश्चय से सोवन शिषर (गगन मण्डल) में अनहद में शिवोऽहं शब्द रागनी की ध्वनि करता है, जो सर्व भौतिक मन वाणी कर्म से रहित है। **मुदरी**=मधुरता की, धीरे-धीरे मधुर (मीठी), मन्द-मन्द ध्वनि से, मधुरि, मधुर नाद, मिष्ठान लिये, सुहावनि।

*भावार्थ*–अनहद गगन मण्डल के स्वर्णमयी सोवन शिखर मे जो खेल हस्तामलक हस्तगत साक्षात्कार हुए, वह खेल बेहद अनूठापन लिये चमत्कृत पाये। जहाँ बिना कर्म (कर्म पंगु) के मनोवृति सुरता-नारी आनन्दानुभूति से नृत्य करती है। बिना क्रिया शक्ति (अक्रिय भाव) के शब्द ताल (करताल)

बज रहे है। मन-वाणी के पार शब्द ध्वनि से रणणण, गणणण, सनणण, हणणण इत्यादि की अगोचर (चारों वाणी से परे) अबाणी रूप से मधुरता लिये सुहावनी मधुर राग ध्वनि से (वदन मूक, धर्ममूक, अज्ञान मूक से परे अर्थात् ज्ञान गुँगा) गायन कर रहा अथवा हो रहा है।

**बहरा सुन्या पांगला भागा, अन्धा नृत्य निरखने लागा।**
**उलटा पन्थ खोज नहीं दरसे, सो साधु घर ऐसा परसे ।।24 ।।**

*शब्दार्थ–* **बहरा**=कान से न सुनने या कम सुनने वाला। श्रौत्रिय इन्द्रिय रहित भौतिक चर्चा से दूर बहरा शब्द गुँजार को अनहद (दशवाँ) में विभिन्न रागनियों की ध्वनियां श्रवण करता है। **पांगला**=पंगु, जो पैर से चलने में असमर्थ हो, लूला, लंगड़ा, पंगुल। पदपंगु, कर्मपंगु, सुमति पंगु, ज्ञान के संयम साधन से योग विधि में मन-प्राण द्वारा श्वासोश्वास के साथ प्रणव शब्द को लेकर भाग रहा है। **अन्धा**=बिना आँखका, नैत्र हीन, ज्योति हीन। अहंता-ममता के चक्षु रहित मुमुक्षू-योगीजन शब्द-ज्ञान प्रकाश से जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति (त्रिगुण) से आगे अनहद देखता है। **परसे**=जाने, पावे, स्पर्श करे, पाता है।

*भावार्थ*– जहाँ श्रोत्रेन्द्रिय रहित बहरा सुनता (श्रवण कर्ता) है, जो शुभाशुभ कर्मेन्द्रिय रहित (कर्म पंगु) प्राण पुरुष नृत्य करता भागता है, जिसे भौतिकता रहित अन्धा (इन्द्रिय विहीन) ज्ञान चक्षु द्वारा उस नृत्यकला को देखने लगा। यह सारा विपर्य्य पंथ (उल्टा) खेल है, जिस का कोई निशान-अनुसंधान नहीं लगता, किन्तु ऐसे उल्टे (विप्यर्य) पन्थ को साधक सिद्ध साधु सहज रूप से प्राप्त कर लेता है।

**नटणी पाँव बरत पर मेले, लोक हंसे मुख आप न बोले।**
**सब की सुनी मैं कान न दिया, निश्चय हेर अगम घर लिया ॥25 ॥**

*शब्दार्थ*– **नटणी**=दृश्य काव्य की अभिनय करने वाली सारिका, नाट्य कला की प्रवीण पात्रा, सिद्धान्त-अन्तर्वृति शब्द के साथ श्वासा बर्त (रस्सी) पर साधन में रहती है। श्वासा डोरी पर निरन्तर (अर्ध-ऊर्ध्व के बीच) अन्तर्हित गमन करके नृत्य रत रहती विवेक वृति। **हेर**=देख कर, खोज कर, सम्भाल कर, दत्तचित पूर्वक। **अगम घर**=दुर्गम स्थल, अत्यन्त दुर्लभ निश्चय, दुर्बोध स्थान, गहन चिन्तन।

*युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।*
*युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥*

(गीता 6/17)

*भावार्थ*– जैसे नटणी रस्सी पर नृत्य करती है, नायक ढोल बजाता है, दर्शक गण विविध चर्चाओं के साथ हंसते, ताली बजाते है। सब कुछ हो हल्ला के होते हुए भी नर्तकी (नायिका) मुख से कुछ भी नहीं बोलती है, केवल अपनी ध्यानस्थ एकान्त मुद्रा में रञ्चभर भी अन्यमन्यस्क चंचल नहीं होती है। इसी प्रकार हमारे साधन प्रवेश काल में सतगुरु शरणागत से सिद्धावस्था तक नाना तरह की लोक किम्वदन्तियाँ, निन्दा-स्तुति, लोक गाथाऐं इत्यादि सभी व्यञ्जनाऐं सुनता रहा, किन्तु किसी भी व्यक्ति की लोक चर्चा पर ध्यान (कान) नहीं लगाया।

राजयोग हठयोग, मन्त्रयोग और लययोग के साथ से अपनी मन-बुद्धि विवेक के निश्चय को देख कर दुर्गम-दुर्बोध स्थित के निश्चय में (घर) धारण (प्राप्त) किया।

**ऐसी गति पिछाने योगी, सदा समान ब्रह्म रस भोगी।**
**'बनानाथ' निश्चय कहि वाणी, सो गुरु मुखि जन लेहि पिछणी॥26॥**

*शब्दार्थ*– **ऐसी**=इस तरह, इस प्रकार की। **गति**=रीति, विधि, मर्यादा, साधना। **ब्रह्म रस भोगी**=ब्रह्मानन्द प्राप्त करता। **पिछाने**=पहिचाने, जाने, पहिचान करे। **गुरु मुखि**=

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, यह पांचों यम है। पवित्रता, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान, यह पांचों नियम है। आसन-सिद्धासन एवं पद्मासन की दृढ़ साधना योग में सहायक। प्राणायाम– इडा-पिंगला-सुषुम्ना द्वारा लोम-विलोम, भस्त्रिका इत्यादि से पूरक, कुम्भक, रेचक, भेद-उपभेद सहित साधन करने वाला समर्पित भाव का साधक। अथवा-विवेक, वैराग्य, शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपराम, मुमुक्षता सहित सतगुरु शरणागति में शरणापन्न गुरुमुखि-साधक जन योगी

*भावार्थ*– इस तरह की रीति-नीति एवं मर्यादा को चितवृति निरोधकर्ता समर्थ योगी पुरुष ही पहिचान करते है। जो नित्य निरत्स्यानन्द परम तत्व ब्रह्म के परमानन्द रस का उपभोग करने वाले ही होते हैं।

स्वामी बनानाथ जी महाराज ने मन-बुद्धि के विवेक द्वारा प्रयोग सिद्ध ज्ञान का निश्चल बोध करके प्रस्तुत वाणी कथन की है। जिसको विवेकादि चतुर्साधन युक्त सतगुरु सान्निध्य शब्द-सम्मुख रहने वाला (गुरुमुखि) मुमुक्षू जन ही पहिचान कर निश्चय करते है।

**योग तणा महरम लख गाया, अगम निगम यों यह दरसाया।**
**या विधि योग युक्ति कर जोवे, सो योगेश्वर निर्भय होवे ॥27॥**

*शब्दार्थ*– **महरम**=भेद या रहस्य की गुँझ गति, भैद की बात। **योग**=मन-बुद्धि के योग से चित वृत्तियों का संयम करके जीव-ईश्वर की सामीप्यावस्था प्राप्त करने की स्थिति। **निगम**= वेद (चार वेद) ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद के रहस्य रूप सार तत्त्व उपनिषद् ज्ञान, ऋषियों द्वारा कहा गया ज्ञान। **अगम**=शास्त्र (छः शास्त्र) पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, सांख्य, योग, न्याय, उत्तरमीमांसा (वेदान्त), इन के कर्ता-क्रमशः जैमिनी, कणाद, कपिल, पतंजलि, गौतम, व्यास। **युक्ति**=साधन विधि सहित, आसन, अहार, निद्रा की दृढ़ता से सतगुरु कृपा-सार्थकता की साधना विधि। **योगेश्वर**=योग में पारंगत, योग के ईश्वर, योग है ईश्वर, योग में है ईश्वर।

*भावार्थ*– इस प्रकार हठयोग, मन्त्रयोग, राजयोग, लययोग के रहस्य भेद को साधन सहित विचार युक्त निश्चय पूर्वक जान कर कथन किया। वेद-शास्त्र योग पद्धति की साधना को इस तरह कह कर दरसाते है, यही प्रमाणिक साक्ष्य है।

इस तरह विधि-युक्ति संगत योग-साधन की साधना करके देखे, वह योगियों में श्रेष्ठ योगेश्वर भव-भय के कर्म भोग से सदा-सर्वदा के लिये निर्भयता प्राप्त कर लेते है।

**अब सुनो सुन्य की साखा, सदा समान परमाण न जाका।**
**अप्रमाण अलोगत सोई, आदि अन्त जा मध्य नहीं कोई ॥28 ॥**

*शब्दार्थ*– **परमाण**=परिमाण, नाप-तोल, सीमा। **प्रमाण**=अवधि या सीमा सुचक कथन या प्रतीति, प्रत्यक्ष, अनुमान। **अप्रमाण**=अपार, असीम, परिणाम रहित, प्रमाण का अभाव, असमम्भव, अकथनीय, मन-वाणी इन्द्रिय गत अनुभव से परे। **अलोगत**=अद्रश्य, न देखा हुआ, अलोकित, अदर्शन, अन्तर्ध्यमान की अवस्था का लुप्त-गुप्त प्रभाव।

*भावार्थ*– अब आगे श्रवण करो, जो शून्य मण्डल गगन की साक्ष्य कथन करता हूँ, । वह नित्य सदा सर्वदा सर्वत्र सामान्य रूप से व्यापक ब्रह्म का अनुभव-दर्शन है। जिस की कोई सीमा परिमाण अथवा शास्त्र-मन एवं वाणी का इन्द्रिय जन्य प्रमाण नही हो सकता। वह चेतन पुरुष अपरिणामी-अपरिमाण रूप से इन्द्रिय-गोचर जन्य मन-वाणी शास्त्र के प्रमाण रहित नित्य अप्रमाण अनापति परम तत्त्व स्वरूप है। जिन का कभी कहीं भी त्रिकाल सम्भाव्य आदि मध्य अन्त नही है।

**हंस जाय शुन्न घर जोया, जैसे हीर हीर को पोया।**
**रवि अरु बिम्ब सदा है भेला, ऐसे हुआ ब्रह्म से भेला ॥29॥**

*शब्दार्थ–* **हंस**=जीव (अष्ठपुरी सहित चेतन), जीवात्मा-शूक्ष्म शरीर गत प्रक्रिया में असत्वापादक, अभानापादक, भ्रान्ति (अध्यास), परोक्ष, अपरोक्ष, हर्ष, शोक सहित चिदाभास की यह सात अवस्थाऐं भ्रम की छाया में समय-समय पर प्रतिभासित होती है, जो ज्ञान से नष्ट होती है। **शुन्न**=शून्य, खाली, रिक्त, आकाशवत, खिन्न मन, तटस्थता, अन्तरिक्ष, बिन्दु। **अक्षय**=चेतन शून्य, व्यापकत्व, परम तत्व अधिष्ठान। **बिम्ब**=प्रतिबिम्ब, छाया, रश्मि-प्रकाश, आभास, झलक। **ब्रह्म**=कुंटस्थ, चिदाभास का एकीकरण भाव, निर्द्वन्दता, सूर्य से किरण, चन्द्र से चन्द्रिका, बर्फ से सीतलता, मणि से मूल्य, वस्त्र से सूत्र, शस्त्र से लोह की भाति नित्य अभिन्नता कारक है।

*भावार्थ–* जीवात्मा (मन बुद्धि सहित) ने स्वान्तः नित्य शान्ति स्थल शून्य धाम (गगन) में स्थिरता पाकर अपने आप को देखा। जैसे हीरे से हीरे की ज्योति से ज्योतिर्मान हो, उसी तरह जीवात्मा-परमात्मा में एकीकरण समाहित सामीप्यता को

प्राप्त करके रहा। सूर्य से सूर्य रश्मि, चन्द्र से चन्द्रिका (चाँदनी), जल से तरंग नित्य अभिन्नता रूप साथ ही है। ऐसे ही कर्म योग सिद्धि द्वारा विक्षेप शक्ति निवृति पूरक ज्ञान योग की अद्वितीय मिल्लनता पाई।

**जीव ब्रह्म जहाँ दूजा नाही, सहजे मिला समरथ के माही।**
**समरथ सांई है सब मांही, रहता पुरुष दीखता नाही ॥30॥**

*शब्दार्थ*– **जीव**=(1) बुद्धि सहित चिदाभास एवं दोनों का अधिष्ठान कूटस्थ, तीनों के समूह को जीव कहते है। (2) चिदाभास सहित पुर्यष्ठिका से सूक्ष्म शरीर मिलकर जीव कहलाता है। (3) बुद्धि, अविद्या और चिदाभास, इन का अधिष्ठान कूटस्थ है, वह जीव है। **ब्रह्म**=विधेय विशेषण-सत, चित, आनन्द एवं निषेध विशेषण-अभंग, अक्षय, अविनाशी, अडोल, अखेल, निराकार, निगुण, अद्वैत, अद्वय, अनूप, असंग, अद्वितीय, अजन्मा, निर्विकार, अव्यक्त, अचल, अव्यय, अक्षर। **सहजे**=स्वाभाविकता से, सुगमता पूर्वक, इन्द्रिय संयमता सहित साधना। **समरथ**=प्रभावशील शक्तिवान, हितकर्ता, प्राक्रमशील, सर्वेश्वर्यवान। **रहता पुरुष**=स्थायी रूप से नित्य-सत्य चेतन जो सदैव स्थिर-अचल है।

*भावार्थ–* जहाँ अद्वय भाव में जीव-ब्रह्म के द्वैत दर्शन नहीं होता है। अल्पज्ञ जीव सर्वज्ञ समर्थ सत चेतन आनन्द में मिल कर असीम हो गया। वह परम समर्थ परमानन्द परम चेतन पुरुष सर्वत्र सभी में नित्य व्यापक है। वह अचल स्थिर अखण्ड (नित्य स्थिर रहता) परम पुरुष कभी कहीं साकार सापेक्ष से दृश्य-श्राव्य में नहीं आता।

**जड़ चेतन में है इकसारा, भर्‍या ब्रह्म नहीं कछु न्यारा।**
**पुष्प वासना दीसत नाही, ऐसे ब्रह्म भर्‍या सब माही॥31॥**

*शब्दार्थ–* **जड़**=चेतना रहित, चेष्ठा रहित स्तब्ध, असमर्थ, द्वादश धर्म-अनित्य, विनाशी, अशुद्ध, नाना, क्षेत्र, आश्रित, विकारी, परप्रकाश्य, हेतुमान, व्याप्य, देश, काल, वस्तु, गुण धर्म कृत परिच्छेद (परिच्छिन), क्षर वाला। **चेतन**=आत्मा, जीव, परमेश्वर, चेताने वाला चित स्वरूप, द्वादश विशेषण-नित्य, क्षेत्रज्ञ, शुद्धस्वरूप, अविक्रय, हेतु, अव्यय, एक, आश्रय, स्वप्रकाश, व्यापक, अपरिच्छिन्न (परिपूर्ण), असंगी, अनावृत्त एवं अक्षर। **इकसारा**=समान, बराबर, सदृश्य, अकेला, एकाकी, सर्वत्र एक समान।

*भावार्थ–* सो (वह) सच्चिदानन्द अद्वय अनन्त अचल अनादि सर्वत्र सर्वदा जड़-चेतन में सामान्य रूप से एक समान है। नाम-रूप, दृश्य-श्राव्य, पिण्ड-ब्रह्मण्ड इत्यादि में विभुवत (आकाश की भांति) व्यापक घन भरा हुआ है। वह देश, काल, नाम, रूप, वस्तु परिच्छेद से रहित है। वह कहीं किसी से भिन्न नही है, नित्य अपरिच्छन्न, अन्वय अव्यय रूप से पूर्ण है। जैसे पुष्प में सुगन्ध, दूध में घी, रत्न में मूल्य अभिन्न रहकर देखने में नहीं आता, ऐसे ही परम तत्व ब्रह्म चेतन सब में पूर्ण चराचर में हैं अर्थात् एक ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

**मैं नहीं जहाँ मैं चल आया, ऐसे खेल अधर में पाया।**
**नहीं जहाँ पिण्ड पवन भी नाहीं, सकल खेल दीसत मो माहीं ॥32॥**

*शब्दार्थ–* **मैं**=सर्वनाम उत्तम पुरुष में कर्ता का अहं रूप, स्वयं, खुद, अस्तित्व का शुद्ध अहं धारक चेतन, माया विहित भौतिक धारणा (अशुद्ध अहं)। **अधर**=अन्तरिक्ष, आकाश, आधार रहित, आश्रय हीन, ऊर्ध्वमुख, गगन। **पिण्ड**=शरीर, काया, ढेला, लौंदा, ठोस गोला। **पवन**=वायु, प्राण, समीर, हवा, श्वास, सांस। **पिण्ड-पवन**=स्थूल प्रक्रिया की दृश्य-द्रष्टि सार्थकता का जीवन, चेतना सहित देह।

*भावार्थ*– जहाँ भौतिकवाद के जीव कृत मिथ्यात्व का 'मैं' नहीं है। साधन युक्ति, सतगुरु भक्ति से साधनारत बहता हुआ आकर उस अपरमित शुद्ध सोऽहं स्वरूप में पहुँचा। ऐसा तत्व स्वरूप अचिन्तनीय अविस्मरणनीय तत्व अपने आप-आप को ही पाया। ऐसे अद्वितीय अद्वय में पिण्ड-पवन इत्यादि के भौतिक नाम-रूप नहीं है। यह सारा द्रश्य-दर्शन मेरे परमानन्द स्वरूप में ही दर्शन दर्शित है।

**जो दीखे सो कहिये माया, आप अरूप अथाग रहवाया।**
**काया कर्म नहीं जहाँ कर्ता, भोक्ता भोग नहीं जहाँ भर्ता ॥33॥**

*शब्दार्थ*– **माया**=अविद्या, अज्ञानता, पृकृति, छल, धोखा, लक्ष्मी, सम्मति, प्रकृति, ईश्वर की वह कल्पित शक्ति, जो समस्त सृष्टि की उत्पति का मूल कारण है। जिस से सृष्टि का कार्य चलता है, इन्द्रजाल, जादू, त्रिगुण मय प्रकृति। इन्द्रिय-अन्तःकरण के गो-गोचर का विषय, मन-वाणी का विषय बोध माया है। **अथाग**=जिसका थाह (थाग) नहीं हो, असीम, अगाध, अपरिमित, अपार, गम्भीर, गूढ़। **काया**=शरीर (स्थूल, सूक्ष्म, कारण), देह, तन, पिण्ड, स्थूल प्रक्रिया एवं सूक्ष्म प्रक्रिया सहित अज्ञान (अविद्या) विहित

रचना का उपक्रम। **कर्म**=वह जो किया जा सके, तन-मन वाणी द्वारा होने वाली क्रिया, धार्मिक कृत्य, (संचित, प्रारब्ध, आगामी या क्रियमाण) जिसके किये बिना रहा नहीं जा सकता। **कर्ता**=काम या कर्म करने वाला, रचने या बनाने वाला, ईश्वर-विधाता। **भोक्ता**=भोग करने वाला, सुख-दुःख को भोगने वाला, ऐश-भोजन करने वाला। **भर्ता**=अधिपति, स्वामी, भरण-पोषण करने वाला, विष्णु, समर्थ।

*भावार्थ*– यह नाम-रूप का दृश्य-श्राव्य जो भासमान है, वह सब प्रकृति मय त्रिगुणी माया ही है। इससे परे परब्रह्म तत्व आप नित्य अरूप अलेह्य, अदाह्य, अक्लेद्य, अनन्त, अलाग, अथाग, नित्य, स्थिर (रहता) है। ऐसे नित्यानन्द अजय अभय अक्षय में काया-कर्म, कर्ता-भर्ता, भोग्य भोग भोक्ता, ज्ञेय ज्ञाता-ज्ञान, ध्येय-ध्याता और ध्यान जन्य त्रिपुटी कदापि नहीं है।

**भेदी जके भ्रम गढ जीता, अनुभव बात अगम की कहता।**
**महरम बिना कथो सब कोई, आप मूआं बिन मुक्त न होई ॥34॥**

*शब्दार्थ*– **भेदी**=भेद मय सारे रहस्य को जानने वाला भेदू, किसी गुप्त रहस्य को कारण-कार्य सहित जानने वाला,

विधि-विधान का द्रष्टा। **जके**=वही, भेद को जानने वाला ही। **भ्रमगढ**=अज्ञान मय या भ्रान्ति जन्य अविद्या अथवा प्रकृति रूपा त्रिगुणी माया रचित समष्टी सृष्टि एवं व्यष्टि शरीर की रचना का किला (कोट) अर्थात् देह रचना के कारण सहित कर्म का स्वरूप। **अनुभव**=साधना से प्राप्त होने वाले ज्ञान का कथन। **महरम**=रहस्य का भेद, परम गुह्य ज्ञान, गोपनीय युक्ति।

*भावार्थ*– इस परम रहस्य के भेद को जानने-मानने वाले जो भी है या हुए है, उन्होने इस भ्रमगढ़ (शरीर के प्रपंच या विश्व के भौतिक प्रपंच विशेष) को विजय कर के जीत लिया है अर्थात् निर्भ्रान्ति-निर्भ्रम हो गये। वही प्रयोग जन्य (साधन जनित) अनुभव की बात (मायिक भेद अथवा चतुर्वाणी से परे) गम से परे की आत्मीय चर्चा को चर्चित करते है।

रहस्य भेद जाने बिना केवल कथनी काव्य सभी करलो या करते है, किन्तु यह निश्चय समझ ले कि अपने आप के मूँऐ (मरने) बिना कभी मुक्ति नहीं होती है। जिसे मुक्ति की मांग हो, उन्हे स्वयं मरना होता है। दूसरे के मरने या सन्देश प्राप्त करने से कभी किसी को मुक्ति का मुक्त्यानन्द नही मिल-

सकता है। इसी प्रकार सत्य घटना का कथन रहस्य का साधक ही साधन से प्राप्त ज्ञान (अनुभव) कह सकता है।

*कविता तो बहुला कथे, भोजक चारण भाट।*
*सन्तदास रहणी बिना, खाली जाय निराट॥*

(संतदास अनुभव विलास 49/51)

(1) वक्ता जिस विषय का प्रतिपादन करता है,उस विषय में वह बिलकुल निःसन्देह न हो, इसे 'भ्रम' कहते है।

(2) वक्ता विवेचन में आलस्य, उपेक्षा, उदासीनता, तत्परता की कमी, लोग समझें या न समझें–इसकी बेपरवाह करता है, इसे 'प्रमाद' कहते है।

(3) वक्ता की रुपये-पैसे, मन-बड़ाई, आदर-सत्कार, सुख-आराम आदि लौकिक-पारलौकिक कुछ भी पाने की इच्छा है, इसे 'लिप्सा' कहते है।

(4) वक्ता जिन इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, वाणी आदि से अपने भाव प्रकट करता है, उन कारणों में पटुता, कुशलता नहीं है और वह श्रोता की भाषा, भाव, योग्यता को नहीं जानता, इसे 'करणापाटव कहते हैं।

**जीवत मूवां मुक्त में माले, जाका वचन युगो युग चाले।**
**'बनानाथ' कही अनुभव बाणी, आसोजी कोई सन्त पिछाणी॥35॥**

*शब्दार्थ–* **जीवत मूवाँ**=जीवित रहते ही गम जान कर भ्रमनिवृति रूप दृढ़ ज्ञान की निष्ठा करके जीवन्मुक्त अथवा विदेह मुक्ति प्राप्त कर ली है, जो जीते जी ही मर कर जीये है। **आ सोजी**=यह ज्ञान की धारणा, दुर्गम रीति-नीति, यह सूझमयी दृष्टि। **सन्त**=षट् विकार रहित, षट् रिपुजित, संशय से तरने वाला, विसम्वादाभाव युक्त पंच प्रयोजन सिद्ध साधक। पांच प्रयोजन यह हैं– 1. सर्वप्रपंच (दुःख) की निवृत्ति, 2. परमानन्द की प्राप्ति, 3. तपो मयी तप, 4. ज्ञान रक्षा, 5. सर्व साधन-शास्त्र सम्मत शंका की निवृतिरूप विसंवादाभाव।

*भावार्थ–* जो कर्मयोगी ज्ञान-ज्ञाता अन्तर्दोष रहित, मलावर्ण हीन द्वन्दातीत जीवन्मुक्त (जीवित शरीर होते तन-मन दोषार्णव रहित) विकार शून्य है, वह जीते जी ही जीवन्मुक्ति में आनन्दित है। ऐसे युक्त-मुक्त ज्ञानियों के अनुभव वचन युगान्तरों के बाद तक भी भविष्य दर्शन, लोक हित जीवन के मार्ग को ज्योतिर्मान करते है।

स्वामी बनानाथ जी महाराज कथन करते हैं कि प्रस्तुत इस वाणी को साधन गम्य वास्तिविक उपलब्धि प्रयोग सिद्ध ज्ञान कां अनुभव कथन किया है। इस ज्ञान की समझ-धारणा को-किसी संशय हीन, षट्विकार जित सन्तजन द्वारा ही जानी जा सकती है।

**ब्रह्मज्ञान का निश्चय योई, यामे रती फरक नहीं कोई।**
**पुरुषोत्तम अरु पुरुष प्रकृति, लहे मुमुक्षू याकी युक्ति ॥36॥**

*शब्दार्थ*– **रति**=रञ्चमात्र, रति भर, तिनके जितना भी। **फरक**=अलगाव, दूरी, भेद, अन्तर, कसर, दुराव, पार्थक्य। **पुरुषोत्तम**=सच्चिदानन्द, ब्रह्म, परमात्मा, पुरुषों में उत्तम या श्रेष्ठ पुरुष, शत्रु-मित्र आदि से सर्वदा उदासीन रहने वाला निष्पाप, उत्तम पुरुष, चेतन। **पुरुष**=ईश्वर, कुटस्थ चेतन सहित चिदाभास, सांख्य में अकर्ता तथा असंग चेतन पदार्थ, जो प्रकृति से भिन्न तथा उस का पूरक अंग माना गया है। **प्रकृति**=माया, कारण-कार्यरूपा, त्रिगुणी रचना का मूल आधार, मूला-तूला सहित अष्ठधा, परा एवं अपरा रूप चेतना, ब्रह्माश्रित अपरा।

*भावार्थ*– यह प्रस्तुतीकरण परम ब्रह्म का तत्त्वज्ञान है,

यही परम निश्चय है। इस निश्चलता में रंचमात्र भी अन्तर्भेद, दुर्भाव-दुराव नही है।

पुरुषोत्तम (परमतत्व ब्रह्म) और पुरुष (जीव-ईश्वर) का जीवत्व सहित ऐश्वर्य युक्त ईशत्व तथा प्रकृति जन्य त्रिगुणात्मक माया। इन की युक्तायुक्त युक्ति को कोई साधन विहित साधक मोक्ष की तीव्र इच्छा धारक मुमुक्षू जन ही ले सकता है।

**अब आतम का भाव बताऊँ, तुरिय अतीत ज्ञान दरसाऊँ।**
**जाकी जाण अपार अलागी, निज अनुभव उक्ति उर जागी ॥37॥**

*शब्दार्थ*– **आतम**=अपना, स्वकीय, निजी, सत्रह तत्व (पंच प्राण, पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय, मन, बुद्धि) एवं चिदाभास युक्त जीव, आत्म, आत्मा। **भाव**=मन में उत्पन्न होने वाला विचार या युक्ति पूर्ण उक्ति की प्रवृति का वाचन अभिप्राय, तात्पर्य, कृत्य-क्रिया की विभूति का पाण्डित्य, खयाल। **जाण**=जानने की प्रक्रिया के रहस्य ज्ञान की युक्ति, पहिचान। **उक्ति**=कथन, वचन, अनोखा वाक्य, चमत्कार पूर्ण अनुपम कथन। **अनुभव**=प्रयोग (साधन) द्वारा प्राप्त ज्ञान, परीक्षा से प्राप्त जानकारी, वास्तिविक उपलब्ध तजुरबा अर्थात् तत्त्वबोध।

*भावार्थ*– अब परमतत्त्व ज्ञान योग का रहस्य आत्म-परमात्म का एकात्म भाव प्रस्तुत करता हूँ। जो तीन देश, तीन काल, तीन वस्तु रूप जाग्रत स्वप्न सुषोप्ति सहित स्थूल शूक्ष्म कारण तीनों समूह (त्रिपूटी) का साक्षी द्रष्टा, प्रेरक-दर्शक, जो इन उपयुक्त तीनों से परे (तुरियातीत) ज्ञान है, वह दर्शित करता हूँ। जिसे जानने की युक्ति तत्वज्ञान योग की प्रक्रिया अतिगहन, अपार युक्ति-युक्त सतगुरु गम्य स्थूल-शूक्ष्म भेद-रहस्य के लाग रहित निष्प्रह है। जो प्रयोग (साधन गम्य) द्वारा स्वानुभव प्राप्त ज्ञान है, जिस का चमत्कृत कथन हृदय की अनुपम प्रेरक युक्ति का जागरण है, वही प्रस्तुत किया है।

**आतम अज कुटस्थ अनन्ता, वाको आदि मध्य नहीं अन्ता।**
**सदा सनातन शुद्ध स्वरूपा, अनावृत अलेप अनूपा॥38॥**

*शब्दार्थ*– **आतम**=अपना, स्वकीय तत्त्व, पुर्य्यष्टक (पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्दिय, पंच प्राण, अन्तःकरण चतुष्टय, वासना, संचित कर्म, क्रियमाण कर्म, अज्ञान सहित चिदाभास)। **अज**=अजन्मा, स्वम्भुव, माया-शक्ति, जिस का जन्म नही हो। बुद्धि में व्यष्टि अज्ञान का अधिष्ठान चेतन है, वह कूटस्थ कहलाता है। **कूटस्थ**=जिस पक्ष में बुद्धि में

चिदाभास चेतन जीव है,उसी पक्ष में बुद्धि का अधिष्ठान कूटस्थ है। जिस पक्ष में व्यष्टि अज्ञान सहित चेतन जीव है, उसी पक्ष में व्यष्टि अज्ञान का अधिष्ठान (आश्रय) कूटस्थ कहलाता है। यह कूटस्थ अजन्य, उत्पति रहित ब्रह्म रूप ही है, जैसे घटाकाश महाकाश से न्यारा नहीं है, किन्तु वह महाकाश रूप उपाधि विहित घटाकाश कहलाता है। **अनावृत**=जो ढका न हो, आवर्ण (आवरण) हीन, खुला, अनावेष्ठित, घिरा न हो। **अलेप**=लगाव रहित लुप्त, अलूप, जो लिपायमान नहीं हो। **अनूपा**=उपमा रहित हो, परिपूर्ण अधिक, अनूठा, बेजोड़, अति उत्कृष्ठ, बहुत सुन्दर, जिस के समान दूसरा कोई नही हो, अनुपम, अनुपमता युक्त हो। उपमा, उपमेय, उपमान से परे है।

*भावार्थ*– परम आत्म तत्त्व नित्य अजन्मा, कुटस्थ, अनन्त, अनूप है। जिसका कारण-कार्य भाव सदा आदि मध्य अन्त रहित है। वह सदा अनादित्व से भी अर्थात् सनातन शुद्ध ब्रह्मात्म चेतन स्वरूप है। जो पूर्ण प्रकट, आवर्ण रहित अनावृत है। लुप्त-गुप्त, लाग लपेट रहित नित्य निर्लेप, अनुपम है।

**परब्रह्म है परम प्रकाशी, जाकी सता सत अविनाशी।**
**सत ते फुरी फोरणा माया, तिन सत तम गुण उपजाया ॥39॥**

*शब्दार्थ–* **फुरी**=संस्फुरित हुई, चटपट काम करने की शक्ति या भावना, शीघ्रता। **फोरणा**=संस्फुरणा, संकल्प, इच्छा की जागृति, 'एकोऽहं बहुस्याम' इच्छा शक्ति, फुरना, स्फुटित होना, प्रकाशित होना, तमो माया का स्फुटित-प्रकाशित उच्चरित होना, असत्य का सत्य प्रतीत होने का विपरीत ज्ञान। **उपजाया**=उत्पन्न किये, विस्तृत किये, पैदा किया, उपजकर प्रकट हुए। अविद्या के विरुद्ध ज्ञान, अव्यक्त प्रकृति से संस्कार एवं इन्द्रियजन्य दृष्टि दोष उत्पन्न किये।

*भावार्थ–* सत् चेतन आनन्दघन परब्रह्म, अपरब्रह्म का परम प्रकाशी, शब्द ब्रह्म से भाष्य वक्ता, मन-वाणी से अतीन्द्रिय है। जिसकी सता-शक्ति नित्य सत्य, अविनाशी अचल अनन्त अपार है। परम सता के संस्फुरित संस्मरण से स्फुरित संकल्प से प्रकृतिजन्य त्रिगुणी माया द्वारा अर्थात् रजोगुण, सतोगुण एवं तमोगण की प्रथम सूक्ष्म तरंग से स्थूल सृष्टि का उद्भव सञ्चालन हुआ, यही प्रपंच का कारण-कार्य भाव है।

**ब्रह्मा रजोगुण किया पसारा, विष्णु सतोगुण पोषण हारा।**
**शिव तमोगुण किया संहारा, ये तिहुँ गुण का भाव विचारा ॥40॥**

*शब्दार्थ*– **ब्रह्मा**=ब्रह्म के प्राकृतिक तीन सगुण गुणों में से वह जो रजोगुण की अधिष्ठात्री शक्ति से सृष्टि रचना करने वाला, विधाता, सृष्टिकर्ता। **विष्णु**=अद्वितीय ब्रह्म के प्राकृतिक सगुण गुणों में से वह जो सतोगुण अधिष्ठात्री शक्ति से सृष्टि समुचित का भरण-पोषण करने वाला, वासुदेव स्वरूप, व्यापक तत्व। **शिव**=सर्वोत्तम चेतन ब्रह्म के प्राकृतिक सगुण गुणों मे से वह जो तमोगुण अधिष्ठात्री शक्ति से समस्त सृष्टि का संहारक, प्रलय कर्ता, कल्याण रूप, रुद्र, महादेव, परमेश्वर।

*भावार्थ*– रजोगुण अधिष्ठात्री ब्रह्मा द्वारा प्राण, कर्मेन्द्रिय जगत एवं सतोगुण अधिष्ठात्री विष्णु की वैष्णवी शक्ति द्वारा चार अन्तःकरण एवं पंच ज्ञानेन्द्रिय के शुक्ष्म अपरब्रह्म कारण हुए। जो समस्त सृष्ठिमय प्राण-कर्म जन्य क्रियाओं सहित सृष्टि के पोषण कार्य में पृवृत चेतना के कारण रहे। तमोगुण अधिष्ठात्री तमो शक्ति कल्याण मय शिव की संहारक रुद्र भाव से सृष्टि के कार्य में पंच भौतिक सहायक हुए। यह तीनों गुणों के मायिक प्रपंचमय सूक्ष्म सृष्टि सहित स्थूल प्रपंच का विस्तारक भाव विचार किया और कहा।

**माया तणी आदि नहीं कोई, अपरमाण कहीजे सोई।**
**ब्रह्मण्ड अनन्त ज्ञान है नाना, क्रिया न्यून विशेष समाना ॥41॥**

*शब्दार्थ–* **माया तणी**=तमोशक्ति मलीन रूपा अविद्या एवं सतो शक्ति शुद्ध रूपा माया की शक्ति, जो जीव एवं ईश्वर तत्व का आधार भूत कारण रूपा कही गई है। **अपरमाण (अप्रमाण)**=अपार, असीम, परिमाण रहित, शब्द शक्ति एवं इन्द्रिय जन्य विषयातीत, प्रमाण रहित असम्भव कथन। **ब्रह्मण्ड**=अनन्त पिण्ड में सृष्टि के विभिन्न लोक निवास ही सृष्टि का दृश्य-दर्शन है।

यह मनुष्य का शरीर एक मांस पिण्ड है, तृष्णा रूप सुई से निर्भिन्न होकर उसी ही शलाका पर भूनने के लिए बिंधा गया है, विषय वासना रूप घृत से संयुक्त किया गया है, राग द्वेष रूप अग्नि पर पक रहा है, मृत्यु आकर इसे भक्षण करता है।

गर्भ में आये हुए, बालक जवान, बूढे कोई भी हो मृत्यु (काल) तो सबको अपना ग्रास बना कर ही छोड़ता है। यह जगत् इसी प्रकार का है।

सप्त धातु– रस, रक्त, मांस, मेद (माता की), हड्डी, मज्जा, वीर्य (पिता का)।

सप्त त्वचा– अवमासिनी, रक्त, श्वेत, ताम्र, छेदनी, रोहिणी, स्थूल।

सप्त लोक सृष्टि– माया (नर), यम, गान्धर्व, यक्ष, किन्नर, नाग, दैत्य।

सप्तगंगा–भागीरथी, वृद्धगंगा, कालिन्दा, कावेरी, नर्मदा, वेणी।

| *पिण्ड* | *लोक* | *देवता* |
|---|---|---|
| 1. मूलाधार (चक्र) में | भूःलोक | पृथ्वी लोक |
| 2. लिंग प्रदेश में | भुवःलोक | इन्द्र |
| 3. नाभी देश में | स्वःलोक | शासक |
| 4. मेरुदण्ड में | महःलोक | आधार |
| 5. मेरुदण्ड कुहर में | जनःलोक | अधिपति |
| 6. मेरुदण्ड नाल में | तपःलोक | ब्रह्मा |
| 7. युक्तबंक में | सत्यलोक | अनामी |
| 8. कुक्षि नाभि (उदर में) | विष्णुलोक | विष्णुदेवता |
| 9. हृदय में | रुद्रलोक | रुद्र देव |
| 10. वक्षस्थल में | ईश्वर लोक | तृप्ति रुप ईश्वर |
| 11. कण्ठ के मध्य में | नीलकण्ठ लोक | नीलकण्ठ |

| | | |
|---|---|---|
| 12. तालु द्वार में | शिव लोक | शिव आदिनाथ |
| 13. जिह्वा मूल में | भैरव लोक | भैरव |
| 14. ललाट देश | अनादि लोक | अनादि ज्योति शिव |
| 15. भृकुटी के ऊपर शृंगार में | कुल लोक | कुलेश्वर शिव |
| 16. शंख नाड़ी के ऊपर | कुल लोक | अकुलेश्वर देवता |
| 17. नलिनी स्थान में | 'अ' | देवता |
| 18. ब्रह्मरन्ध्र में | परब्रह्मलोक | अखण्ड पूर्ण परब्रह्म |
| 19. ऊर्ध्व कमल सहस्रगार में | परापरलोक | पराभाव स्वरूप परमेश्वर |
| 20. सहस्रार के ऊपर त्रिकुटी में | त्रिशिखर लोक | दशवाँ सर्व नियमिका पराशक्ति |

**पिण्ड के अन्दर सप्त पाताल (नीचे के सातलोक)**

*महातलं वितलं चैव सुतलं च तलातलम्।*
*महातलं च पातालं रसातलमधस्ततः॥*

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, ब्रह्मखण्ड 7/13)

1. जानू में अतल लोक
2. जाँघ में वितल लोक
3. गट्टे (गुप्फ) में सुतल लोक
4. पैर के अंगूठे में तलातल
5. पाद पृष्ठ में रसातल लोक
6. अंगूठे के अग्र भाग में महातल
7. पाद तल में पाताल लोक

**सप्तद्वीप —**

1. मज्जाओं में-जम्बूद्वीप
2. हड्डी में-शाकं द्वीप
3. प्रवाहिका नाड़ियों में सूक्ष्म (शाल्मलि) द्वीप
4. त्वचा में-क्रौच द्वीप
5. रोमों में-गोपय (पुष्कर) द्वीप
6. नखों में-श्वेत (कुश) द्वीप
7. मांस में प्लाक्ष द्वीप

**सप्त समुद्र —**

1. मूत्र में क्षार समुद्र
2. लार में-क्षीर समुद्र

3. कफ में-दधि समुद्र
4. मेद मज्जा में-घृत समुद्र
5. चर्बी में-मधु समुद्र
6. रक्त में-इक्षु समुद्र
7. वीर्य (शक्र)में-अमृत समुद्र

**जम्बूदीप में अष्टकुल पर्वत –**

हिमालय, विन्ध्याचल, हेमकूट, निषध, कल्हिमान, पारियात्र, गन्धमादन।

1. मेरु दण्ड में-सुमेरु पर्वत
2. मस्तक में-कैलास पर्वत
3. पीठ में-हिमालय पर्वत
4. बायें कन्धे में-मलय पर्वत
5. दायें कन्धे में-मन्दरांचल पर्वत
6. दायें कान में-विन्ध्याचल पर्वत
7. बायें कान में मैनाक पर्वत
8. ललाट में श्री शैल
9. सभी अंगुलियों में अनन्य उपपर्वत माने हैं। इसी प्रकार नवखंड भी पिण्ड में दर्शाये है –

1. मुख में-भरत खण्ड
2. नासिका (दाहिने रन्ध्र में) में-श्री खण्ड
3. नासिका (बायें रन्ध्र में)-शंख खण्ड
4. बायें नेत्र में-एक पाद खण्ड
5. दायें नेत्र में-गान्धार खण्ड
6. बायें कान में-कैवर्त खण्ड
7. दाहिने कान में-महामेरु खण्ड
8. मूल गुदाद्वार में-कर्पर खण्ड
9. उपस्थ (लिंग छिद्र) में-काश्मीर खण्ड

इसी प्रकार नव नदियाँ तथा उपनदियाँ भी पिण्ड के अन्दर समरस है।

1. इडा नाड़ी में-गंगा नदी
2. पिंगला नाड़ी में-यमुना नदी
3. सुषुम्ना में-सरस्वती
4. अन्य प्रधान नाड़ियों में चन्द्र भागा, पिपासा, शतरुद्रा, समंगा, नर्मदा, सुनन्दा, सुगाता, सुजाता, अलखनन्दा, कावेरी, धन्या, पीनसा, तमसा, सरयू।

*गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।*
*नर्मदे सिंधु कावेरि जलेस्मिन् सन्निधिं कुरु॥*

पंचनद– सतजल, व्यास, रावी, चनाव, झेलम।

5. शेष बहत्तर हजार नाड़ियों में छोटी एवं पतली उपनदियाँ कहीं गई है।

अतः ब्रह्माण्ड को घट (पिण्ड) में ही दर्शन बताया है।

**अनन्त**=अन्त रहित, असीम। **ज्ञान**=मन बुद्धि चित द्वारा उपार्जित वास्तिविक जानकारियों का बोध। **क्रिया**=किये गये, कार्य का होना या किया जाना, कर्म का कारण, प्रयत्न, चेष्टा, आरम्भ। **न्यून**=कम, थोड़ा, अल्प, घट कर, हल्का, क्षुद्र। **विशेष**=साधारण के अतिरिक्त कुछ आगे बढा हुआ, विचित्रता सहित सार तत्त्व।

*भावार्थ*– प्रकृति का सतो माया एवं तमो अविद्या रूप ही सृष्टि का कारण-कार्य ही द्रष्टित-द्रश्य है, इस का अन्य कोई आदि कारण नहीं है। इस की कब ? क्या ? कैसे ? कितनी मात्रा ? है, इनका विस्तार इत्यादि अपरमित, अपरमाण, अप्रमाणिक रूप से कहा गया है।

यह अनन्त ब्रह्मण्ड का अनन्त ज्ञान, अनन्त क्रिया, करण-

कारण सहित न्यून-विशेष, सामान्य इत्यादि अकथनीय लीला विस्तार है।

**माया सब चेतन आधारा, आतम साक्षी जाननहारा।**
**जो जो भाव बन्धे जा संगी, आतम निरालेप अनअंगी ।।42 ।।**

*शब्दार्थ*– **आधारा**=आश्रय, अवलम्ब, सहारा, अधिष्ठान, मूल, आश्रय दाता। **निरालेप**=किसी लेप या आक्षेप रहित, अलिप्त, निर्लिप्त, जो किसी प्रकार से लिपायमान नहीं हो, असंग। **अनअंगी**=अभंगी, अभङ्गी, अखण्डी, पूर्णता लिये क्रम से न टूटे, पूर्ण रूप, यह अपरा माया-परा तत्व के अश्रित ही चेतना प्राप्त करके सत्य प्रतीत होकर दृष्टि-द्रश्य की सृष्टि को रचती है।

*भावार्थ*– वह प्रकृति जन्य माया का परम आधार-आश्रय अधिष्ठान ब्रह्म चेतन ही है। प्रकृति ब्रह्म अभिन्न अर्थात् 'गिरा-अर्थ जल वीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न'। परम चेतन आत्म तत्व सर्व दृश्य का द्रष्टा-साक्षी, सर्व विवरण को जानने वाला है। यही विहंगम योग में साक्षी स्वर्वेद का रहस्य है।

प्रपंच दृश्य में जो जो भाव जैसा जैसा देश, काल, वस्तु के साथ बन्धे गये या साधे जाते है, वैसा ही अध्यास, आभास

द्वारा भ्रान्ति दर्शन होता है, किन्तु परमात्मा-आत्म तत्व सर्वथा निरालेप असंग, अनंग रूप से विराजमान (अवस्थित) है।

**उत्पति स्थिति लय माया मांही, आतम उत्पति थिति लय नाही।**
**सदा एक रस निश्चल थाया, हानि वृद्धि में कबहूँ न आया ॥43॥**

*शब्दार्थ*– उत्पति=उद्भव, जन्म, पैदाईस, प्रकटता, प्रत्यक्ष होना, साकार हो जाना। **स्थिति**=एक स्थान पर यथावत स्थिति में रहना, दशा, हालात, वह विधिक स्थिति जो अपने क्षेत्र में निश्चित सीमा तक मयार्दित सम्मान सूचक होती है। **लय**=एक का दूसरे में विलीन होना, सारी सृष्टि या जगत का होने वाला विनाश, प्रलय, नाश, संश्लेष-मिल जाना। **एक रस**=समान, एक ढंग का, न बदलने वाला, सर्वदा-सर्वत्र एक रूप रहने वाला। **हानि**=क्षय, नास, क्षति, विनाश, लय, इति। **वृद्धि**=लाभ, बढ़ना, बढ़ने की क्रिया, अर्थात् द्वन्दभाव-अन्वय-व्यतिरेक, आदि-व्याधि, अस्त्र-शस्त्र, उत्पत्ति-नाश, उपक्रम-उपसंहार, उष्ण-शीत, जन्म-मरण, अथ-इति, प्रारम्भ-समाप्ति, खंडन-मंडन, वादी-प्रतिवादी, शुभ-अशुभ, सामान्य-विशेष, सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, शुद्ध-अशुद्ध, अर्धः-ऊर्ध्व, आकाश-पाताल, वृष्टि-अनावृष्टि, माता-पिता, दिन-रात्रि, प्रातः-संध्या, पुरुष-स्त्री, ब्रह्म-माया, ज्ञान-

अज्ञान, परा-अपरा, जड़-चेतन, राम-रावण, कृष्ण-कंस, संज्ञा-क्रिया, व्यष्टि-समष्टि, गुण-दोष, भूख-प्यास इत्यादि।

*भावार्थ*– यह दृश्य जगत, पिण्ड-ब्रह्मण्ड, देश, काल, वस्तु मय नाम-रूप सृष्टि परिच्छेद का उद्‌भव (उत्पत्ति), स्थिति एवं लय-प्रलय सब कुछ माया के झूँठे खेल में कल्पित आरोपित मात्र है। आत्मतत्त्व इस मायिक सृष्टि के उत्पत्ति स्थिति और प्रलय से सर्वथा-सर्वदा परे अलाग निष्प्रपंच है।

*यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तंगच्छन्ति नाम रूपे विहाय।*
*तथा विद्वान्नामरूपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्॥*

(मुण्डकोपनिषद्, 3/2/8)

जिस प्रकार सागर में समाहित होने वाली नदियाँ अपने नाम और रूपको विसर्जित कर देती हैं; वैसे ही अपने नाम-रूप को त्याग करके आत्मसाक्षात्कार प्राप्त सन्त सर्वोच्च से भी उच्च परम ब्रह्म परमात्मा में लीन हो जाते हैं। यद्यपि नदियाँ कई हैं; परन्तु वे सागर से मिलकर एक हो जाती हैं। इसी प्रकार संसार की विविधतायें अन्तरात्मा के असीम विस्तार में समाहित होकर एक हो जाती हैं।

जीवित रहते हुए भी सन्त अपनी आत्मा को परमात्मा में

समाहित कर देता है। इसलिए उन्हें यह संसार, सागर के समान प्रतीत होता है। इस अवस्था में रहस्यवादी दृष्टि से उनके प्राण परमात्मा में लीन हो जाते है। उनके मन का भी वास्तव में कोई अलग अस्तित्व नहीं रह जाता। बल्कि, परमात्मा में एक प्रतिभासित केन्द्र के समान हो जाता है।

उनकी आत्मा, मन, प्राण और व्यक्तित्व के अन्य अवयव अपने मूल-परमात्मा में समाहित हो जाते हैं। वे सांसारिक प्रपंच के बीज को ही निर्मूल कर देते हैं। इसलिए वर्तमान प्रारब्ध समाप्त होते ही उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

परमानन्द सच्चिदानन्द घन नित्य एक रस, व्यापक निश्चल-अचल है। द्वन्दमय होने-मिटने, हानि, वृद्धि (लाभ) क्षय-लय में वह कभी आया नहीं और आयेगा भी नहीं, वह त्रिकाल अबाध्य अनन्त स्वरूप है।

**आतम में माया की हाणी, ज्यों भानु में रात विलाणी।**
**नित आतम निर्मांया सोई, जहाँ माया का लेश न कोई ।।44।**

*शब्दार्थ–* **हाणी**=हानी, हानि, टूटने-फूटने आदि के कारण होने वाला नाश। **विलाणी**=बिलाना, विलाना, नष्ट होनी, अदृश्य होने की क्रिया इत्यादि मिट जाती है।

**निर्माया**=माया से परे, माया के प्रपंच से रहित, जिस में प्रपंच नहीं है। **लेश**=अल्प, थोड़ा, रंचमात्र, रंचक, ससंर्ग-चिह्न, लाग-लपेट।

*भावार्थ*– आत्मतत्त्व जो कूटस्थ रूप से अधिष्ठान ब्रह्म ही है। ऐसे आत्म (परमात्मा) तत्व में माया-प्रपंच का अस्तित्व गौण है अर्थात् माया जनित नाम रूप नही पहुँच पाता। वह गूढ एवं सत्य शुद्ध अनूप है। परम तत्व माया यों खो जाती है, जैसे कि–सूर्य की रश्मि में रात्री, प्रकाश में अन्धकार अर्थात् वहीं विलय गुप्त-लुप्त अस्तित्व हीन हो जाता है, कहीं जाना-आना नहीं होता, उसी के अन्तर्गर्भ भू में समाहित हो जाता है। आत्म तत्व नित्यानन्द माया रहित (निर्माया) अर्थात् माया के नाम-रूप मय प्रपंच का रञ्चमात्र (चिन्मात्र) भी कोई किसी प्रकार का संसर्ग-लेश-लेप नहीं है।

**पुरुष अरु पुरुषोत्तम एका, लय विक्षेप नहीं देख अदेखा।**
**निरान्तक निर्वाण अथाई, आपोई आप और नहीं काई ॥45॥**

*शब्दार्थ*– **पुरुष**=सांख्य शास्त्र में एक अकर्ता, असंग चेतन, जो प्रकृति से भिन्न तथा पूरक अंग माना गया है, आत्मा, मनुष्य, जीव, ईश्वर, परमात्मा। **पुरुषोत्तम**=पुरुषों में समाहित

उत्तम पुरुष, शत्रु-मित्र द्वन्द आदि से सर्वदा उदासीन निर्लिप्त भाव का निष्पाप चेतन ब्रह्म, चरित्रवान धर्मवान धर्मरूप पुरुष। **लय**=एक का दूसरे में समाहित होना, विलय होना, सारी सृष्टि का प्रलय। **विक्षेप**=इधर-उधर फेंकना या डालना, चंचलता, बाधाओं में भटकना। **निरान्तक**=निर्भय, निडर, आतंक रहित, बिना किसी पीड़ा के स्वस्थ, चेतन।

*भावार्थ*– जीवात्मा अथवा ईश्वर (अविद्या या माया उपहित) चेतन और परम पुरुषोत्तम परब्रह्म अर्थात् अपरब्रह्म सहित ब्रह्म सदा अद्वितीय एक स्वरूप है। उस में लय-विक्षेप, उत्पति-प्रलय, देख-अदेख, दृश्य-द्रष्टा, नाम-रूप इत्यादि द्वन्दज उपाधि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वह नित्य निर्भय, आतंक हीन कल्याण स्वरूप होने-मिटने से परे केवल आप ही आप है, चेतन के अतिरिक्त अन्येत्तर कोई नहीं है।

**कहा अनातम परमातम तुरिये, तुरिय अतीत प्रिय निष्प्रिये।**
**आदि अन्त मध प्राप्त सौजी, निश्चय जाण योई निरभौजी ॥47॥**

*शब्दार्थ*– **निश्चय**=भ्रम या दुविधा रहित धारणा, द्रढ संकल्प, पक्का विचार, निर्णय। **सौजी**=शक्तिशाली सुद्धि, सूज, सूझ, तत्वमयी समझ, सौजी, सौज। **निर्भोजी**

(निरभोजी)=निर्भयता सूचक सिद्धि, निडरता, बेखौफ, निर्भय, भय रहित।

*भावार्थ*– यह प्रस्तुत निश्चलता का निश्चय निज तत्व-वेता (तत्वदर्शी) ब्रह्मज्ञानी द्वारा कहा गया है। जो वेदान्त एवं योग सिद्धान्त द्वारा बखान कर कहा गया है। भौतिक सृष्टि के कारण-कार्य में आदि-मध्य और अन्त के सम्बन्ध में शास्त्र-चिन्तन सम्मत तत्वमयी समझ जो प्राप्त हुई। वह निर्भयता पूर्वक निश्चय जान कर परिपक्व किया गया है, वह यही है।

**प्रथम गुरु उपासना गाई, दुतिय योग रीति दरसाई।**
**तृतीय योग अन्त निरधारा, चतुर्थ आतम ज्ञान विचारा ॥48 ॥**

प्रथम=गुरु उपासना-1 से 7 चौपाई तक कथन है।

दुतिय=योगरीति-8 से 22 चौपाई तक वर्णन है।

तृतीय=योगसिद्धता-23 से 29 चौपाई तक चर्चित है।

चतुर्थ=आत्मज्ञान-30 से 47 चौपाई तक उद्‌बोधन है।

परिचय-में 48 से 53 तक-चौपाई-48, सोरठा-1, छप्पैया-1, दोहा-2, कुण्डलिया-1, आदि कथन करके कहे है।

**कुल छन्द गणना में दोहा-**

*अड़तालीस चौपाई, इक सोरठा, दो दोहा, छपै एक।*
*एक कुण्डलिया में कहा, परवाणा फल नेक॥*

(टीकाकार)

भावार्थ– उपयुक्त विवरणानुसार प्रस्तुत परवाणा में प्रथम सतगुरु शरणागति विवेचन, द्वितीय योग साधन विधि की नीति-रीति तथा तृतीय अंश में योग सिद्ध अवस्था सहित अन्तिम (चतुर्थ) तत्वार्थ आत्म सिद्धावस्था का कथन करते हुए विचारों का मन्थन कथन किया गया है।

*(सोरठा छन्द)*

**यह चारों की जाण, ज्योंहि भानु ब्रह्मण्ड में।**
**कहि प्रत्यक्षहि प्रमाण, सब ग्रन्थन को योहि मतो ॥49 ॥**

*भावार्थ*–गुरु उपासना, योग नीति, योगसिद्ध, आत्म ज्ञान की पहिचान अर्थात् जैसे ब्रह्मण्ड में सूर्य का प्रकाश है। इसी प्रकार उपयुक्त चार की जाण (ज्ञान-गाथा) कही गई है।

यह साक्षात रूप से प्रत्यक्ष प्रमाण के समान सभी मत ग्रन्थों का रहस्य कथन किया गया है।

(छपैप्य छन्द)

**गीता में श्री कृष्ण कही, अर्जुन को शिख्या।**
**राजा परीक्षित जोय, ज्ञान शुकदेव से लख्या।।**
**जनकराय मतिधीर, मिल्या गुरु अष्टावक्रा।**
**यदुराय को युक्ति दिवी, दत्तात्रय फक्रा।।**
**'जीयाराम' गुरु सत है, दिया सत्त उपदेश।**
**'बनानाथ' परवाणा भाख्या, रति न राखी रेश।।50।।**

*शब्दार्थ–* **गीता=**'श्रीमद्भगवद्गीता' महाभारत के भीष्म-पर्व से उद्धृत् है। महाभारत युद्ध के पूर्व अर्जुन का व्यामोह दूर करने के लिए कृष्ण ने इसका उपदेश कियाथा। इसमें कर्म, उपासना और ज्ञान का समुच्य है। नीलकंठ ने अपनी टीका में इसके विषय में कहा -

*भारते सर्ववेदार्थो भारतार्थश्च कृत्स्नशः।*
*गीतायामस्ति तेनेयं सर्वशास्त्रमयी मता।।*

*इयमष्टादशाध्यायी क्रमात् षट्कत्रयेण हि।*
*कर्मोपास्तिज्ञानकाण्ड त्रितयात्मा निगद्यते।।*

मधुसूदन सरस्वती ने अपनी टीका गीतागूढार्थदीपिका में गीता के उद्देश्य का विशद विवेचन किया है -

*सहेतुकस्य संसारस्यात्यन्तोपरमात्मकम्।*
*परं निःश्रेयसं गीताशास्त्रयोक्तं प्रयोजनम्॥*

भगवद्गीता के अतिरिक्त और भी गीताएँ हैं, जैसे भागवतपुराण में गोपीगीता, अध्यात्मरामायण में राम-गीता, आश्वमेधिक पर्व में ब्राह्मगीता, अनुगीता, देवीभागवत में भगवतीगीता आदि।

अनेक आचार्यों ने गीता पर साम्प्रदायिक टीकाएँ तथा भाष्य लिखे हैं। उनमें शांकरभाष्य एवं रामानुज भाष्य बहुत प्रसद्धि है। यह अद्वैतवादी तथा निवृत्तिमार्गी भाष्य है। आधुनिक टीकाकारों तथा निबन्धकारों में लोकमान्य तिलक का 'गीतारहस्य' श्री अरविन्द का 'एसेज ऑन द गीता' तथा महात्मा गाँधी का 'अनासक्तियोग' उल्लेखनीय हैं।

अतः जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को आत्मा परमात्मा एवं आध्यात्मिक ज्ञान का उपदेश करता है और उसके संशय का निवारण करता है तो उस उपदेश को गीता कहा जाता है। गीता कभी तो उपदेश देने वाले के नाम से प्रसिद्ध होती है और कभी जिसको उपदेश किया जाता है उसके नाम पर। अर्जुन को जो उपदेश दिया वह भगवद्गीता अथवा कृष्ण गीता के

नाम से जानी जाती है। अनेक प्रकार की गीता है। शिव गीता, रामगीता, सखी गीता, लक्ष्मण गीता, पुरंजन गीता, गरुड़ गीता, काम गीता, ब्राह्मण गीता, अष्टावक्र गीता, ईश्वर गीता, उत्तर गीता, कपिल गीता, गणेश गीता, देवी गीता आदि।

अनेक नामों की गीता है परन्तु गीता नाम से केवल वही गीता जानी जाती है जो श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये गये उपदेश है। यह कोई अलग ग्रन्थ नहीं है वरन् वेदव्यास जी द्वारा रचित महाभारत के भीष्म पर्व का एक अंश है। इस अंश को एक अलग ग्रन्थ का रूप देकर गीता कहा जाता है। उसके आध्यात्मिक सिद्धान्त स्वयं सिद्ध है और आज तक उन्हें किसी प्रकार की चुनौति नहीं दी जा सकी है। विश्व भर के विद्वानों ने इसे धर्म, ज्ञान, भक्ति, उपासना, और कर्म के क्षेत्र में गूढ गंभीर मीमांसा के विषय का ग्रन्थ स्वीकार किया है। इसकी एक विशेषता है कि इसे जिस भावना से देखा जाय यह वैसा ही दिखलाई देता है। किसी को धंर्म प्रधान, किसी को ज्ञान, योग प्रधान, किसी को कर्म प्रधान और किसी को भक्ति प्रधान भासता है। संसार की अनेक भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ है, असंख्य विद्वानों ने इस पर भाष्य एवं टीका लिखी है। भारतीय वेदाचार्यों ने इसे उपनिषद माना है। इसको प्रस्थान

त्रयी की सूची में रखा गया है। प्रस्थान त्रयी उन ग्रन्थों को कहते हैं जिसमें ब्रह्म ज्ञान एवं ब्रह्म विद्या प्रतिष्ठित होते हैं। उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र इसी श्रेणी के ग्रन्थ हैं। मानव जीवन के सांसारिक और परलौकिक विषयों में कोई ऐसा विषय नहीं है जो इसमें अछूता रहा हो।

गीता में अठारह अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में विभिन्न योगों का वर्णन है। इसके विषय विषाद, सांख्य, कर्म, ज्ञान, संन्यास, आत्म संयम, ज्ञान-विज्ञान, अक्षर ब्रह्म, राजविद्या, विभूति, विराट रूप, भक्ति, क्षेत्रक्षेत्रज्ञ, गुणत्रय, पुरुषोत्तम देवासुर सम्पदा, श्रद्धात्रय विभाग और मोक्ष हैं।

अर्जुन पाण्डवों और कौरवों की सेना को कुरुक्षेत्र के मैदान में आमने सामने युद्ध के लिए तैयार देखता है और युद्ध में अपने सब मित्र, परिवार, सम्बन्धी एवं गुरुजनों को जीवन की आशा त्याग कर संग्राम हेतु तत्पर देखकर युद्ध के लिए मना कर देता है। श्रीकृष्ण जो अर्जुन के सारथी हैं, अर्जुन को समझाते हैं कि वीर पुरुषों को अपने कर्त्तव्य से मुख नहीं मोड़ना चाहिये। फल की आशात्याग कर कर्म करना चाहिये। शरीर मरता है परन्तु आत्मा अमर है जिसे कोई शस्त्र काट नही सकता,

आग जला नहीं सकती, वायु, पवन, भी इसे प्रभावित नहीं कर सकते। आत्मा को नित्य जानो। वह एक शरीर छोड़कर दूसरा शरीर धारण करती है। तुम तो केवल निमित्त हो। सब कर्म ईश्वर को अर्पण करते हुए निष्काम कर्म करना श्रेष्ठ हैं। जिनको तुम वर्तमान में जीवन युक्त देखते हो वे सब मरे हुए हैं और ऐसा अनेक जन्मों से हो रहा हैं। मेरे और तुम्हारे अनेक जन्म इसी प्रकार बीत गये है और भविष्य में भी इसी प्रकार जन्म होते रहेंगे। मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार फल पाता है।

श्रीकृष्ण अर्जुन को दिव्य चक्षु प्रदान करते हैं और अपना विराट रूप दिखलाते हैं। भक्ति ज्ञान वैराग्य का वर्णन करते हैं। अपने कर्त्तव्य से विमुख और वेद विरुद्ध कार्य करने वाले नरक में जाते हैं। संसार के सब विषय त्रिगुण मय बतलाते हैं। सात्विक, राजसिक और तामसिक गुणों के अनुसार उपासना यज्ञ, दान, भक्ति, कर्म, धर्म, आचरण, मन, बुद्धि, भोजन आदि का निरुपण करते हैं। भगवान् कहते है कि जब-जब धर्म की हानि होकर पाप बढते हैं, तब मैं स्वयं अवतार लेता हूँ। मैं श्रेष्ठ में भी श्रेष्ठतम हूँ, शस्त्रधारी में राम, वृक्षों में पीपल, हाथी में ऐरावत, वेदों में साम, देवों में इन्द्र, इन्द्रियों में मन, रुद्र

में शंकर, महर्षि में भृगु एवं शब्दों में ओंकार हूँ। इस प्रकार अर्जुन को समझाते हुए कृष्ण कहते हैं कि अर्जुन तुम सब संकल्प विकल्प को छोड़कर एक मेरी शरण में आ जाओ, मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूंगा। अर्जुन को ज्ञान हो गया।

महाभारत में कुल अठारह पर्व हैं। उन पर्वों के अन्तर्गत कई अवान्तर पर्व भी हैं। उनमें से (भीष्मपर्व के अन्तर्गत) यह 'श्री मद्भागवद्गीता पर्व' है, जो भीष्म पर्व के तेरहवें अध्याय से आरम्भ होकर बयालीसवें अध्याय में समाप्त होता है।

वैशम्पायन और जनमेजय के संवाद के अन्तर्गत 'धृतराष्ट्र-सञ्जय-संवाद' है और धृतराष्ट्र तथा सञ्जय के संवाद के अन्तर्गत 'श्री कृष्णार्जुन-संवाद' है।

*(कुण्डलिया छन्द)*

*गीता में बोले सभी, धृतराष्ट्र इकबार।*
*संजय बयालिस बार से, अर्जुन तियासी बार॥*
*अर्जुन तियासी बार, श्री कृष्ण के उपदेश।*
*पाँच सौ चौहतर बार ये, सात सौ श्लोक प्रवेश॥*
*श्री मद्भगवतगीता है, जगत जीव हित मीता।*
*'रामप्रकाश' अच्युत कहै, नित ही पढिये गीता॥*

भावार्थ– अध्याय-18, धृतराष्ट्र-1, संजय-42, अर्जुन-83, श्री कृष्ण-574, कुल योग बना-700 श्लोक।

**कृष्ण**=श्रीकृष्ण के ऐतिहासिक स्वरूप का वर्णन उपस्थित करना एकग्रन्थ रचना का विषय है। महाभारत में कृष्ण एक स्थान पर मानवीय नायक, दुसरे स्थान पर अर्धदेव (विष्णु के अंशावतार) एवं अन्य स्थान पर पूर्णावतार (एक मात्र ईश्वर) के रूप में देख पड़ते हैं, जिन्हें आगे चलकर ब्रह्म अथवा परमात्मा कहा गया।

श्रीकृष्ण का जन्म द्वापुर के अन्त में मथुरा में धन्गकवृष्णि गणसंघ में हुआ था। इनके पिता का नाम वसुदेव तथा माता का नाम देवकी था। उन दिनों इनके पद पर नाना देवक के भाई उग्रसेन इस संघ के गणमुख्य थे। उनका पुत्र कंस एकतन्त्रवादी था। वह उग्रसेन को उनके पद से हटाकर स्वयं राजा बन बैठा था। कृष्ण उसके विरोधी थे। कंस ने कृष्ण को मारने की बड़ी चेष्टा की, जिसकी अतिरञ्जित कहानियाँ भागवत-पुराण में वर्णित हैं। इनसे कृष्ण के अद्भूत पुरुषार्थ का परिचय मिलता है। अन्त में उन्होंने कंस का बध कर उग्रसेन को पुनः गणमुख्य बनाया। कंस के बध से उसका सहायक और श्वशुर, मगध का शासक जरासंध बहुत क्रुद्ध हुआ। उसने चेदिराज शिशुपाल

और कालनेमि की सहायता से मथुरा पर सत्रह बार आक्रमण किया। कृष्ण को विवश होकर मथुरा छोड़ द्वारका जाना पड़ा। कृष्ण नेतृत्व में यादवों ने सौराष्ट्र में एक नये राज्य की स्थापना की। कृष्ण ने अपनी योग्यता के बल पर अखिल भारतीय राजनीति में प्रमुख स्थान ग्रहण किया।

इसी बीच हस्तिनापुर के कौरवों और पाण्डवों में राज्य के बँटवारे के लिए संघर्ष प्रारम्भ हुआ। कृष्ण पाण्डवों के सहायक थे। पहले इन्होंने प्रयत्न किया कि शान्ति के साथ पाण्डवों को अधिकार मिल जाय। कौरवों के दुराग्रह के कारण युद्ध हुआ। इसी युद्ध का नाम महाभारत है। वास्तव में महाभारत के प्रारम्भ में पाण्डव अर्जुन को कुलक्षय की आशंका से जो व्यामोह हुआ, उसका निराकरण कृष्ण ने भगवद्गीता के उपदेश से किया, जो नीति दर्शन की उत्कृष्ट कृति है। कृष्ण बहुत बड़े दार्शनिक अर्थात् तत्त्व दर्शी-ब्रह्मज्ञानी भी थे। इसीलिए इनको येगेश्वर एवं जगद्गुरु (कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्) एवं उपाधि मिली। इनकी सहायता से पाण्डव विजयी हुए और युधिष्ठर (पाण्डवों में श्रेष्ठ) की कृष्ण की अध्यक्षता में पाण्डवराज्य की स्थापना हुई। कृष्ण इस के पश्चात् द्वारिका लौट आये। गृहयुद्ध से उनके यदुवंश का विध्वंस हुआ। जंगल में एकव्याध

के बाण से स्वयं उनका भी साकेतवास हुआ।

कृष्ण का व्यक्तित्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण औ प्रभावशाली था। वे राजनीति के बहुत बड़े ज्ञाता और दर्शन के प्रकाण्ड पण्डित थे। धार्मिक जगत् में भी वे नेता और प्रवर्त्तक थे। उन्होंने समुच्चयवादी (ज्ञान-कर्म-भक्ति-समन्वयी) भागवत धर्म का प्रवर्तन किया। अपनी योग्यताओं के कारण वास्तविक में वे युगपुरुष थे, जो आगे चल कर युगावतार के रूप में स्वीकार किये गये।

पुराणों में कृष्ण का वर्णन ईश्वर के पूर्णावतार के रूप में है। पूर्णावतार का साङ्गोपाङ्ग रूपक भागवत पुराण में पाया जाता है। दुष्टों का अत्याचार, अवतार का उद्देश्य, कारागार में जन्म, योगमाया का जन्म, गोचारण, गोप तथा गोपियाँ, उनका अनन्य प्रेम, दुष्टदलन, कंसवध, रास, वेदान्त शिक्षण आदि का विस्तृत वर्णन और निरूपण इस पुराण तथा अन्य पुराणों में उपलब्ध है। हरिवंश (महाभारत के परिशिष्ट) में कृष्ण की कथा दुबारा कही गयी है।

अर्जुन=पाण्डु के तृतीय क्षेत्रज पुत्र। प्रथम दो क्रमशः युधिष्ठिर और भीम थे। इनकी माता का नाम कुन्ती था, जो

पंच कन्याओं में से एक थी। उसने दुर्वासा द्वारा विरचित मन्त्र से इन्द्र का आह्वान किया था और उन्ही के सहवास से अर्जुन की उत्पति हुई थी। अतः अर्जुन इन्द्र के ही औरस पुत्र हुए। धनुर्वेद-में पारंगत गुरु-द्रोण के ये प्रधान और सर्वप्रिय शिष्य थे। बाण-विद्या के क्षेत्र में महारथी कर्ण इनके एकमात्र प्रतिद्वन्दी थे। कला के बल से इन्होंने स्वयंवर में मत्स्य वेध कर द्रौपदी से विवाह किया, जो नियति के विधान में पड़कर पाँचों पाण्डवों की वधु बनी, परन्तु अर्जुन से उसका विशेष प्रेम होना स्वाभाविक था। अपने बारह वर्ष के गुप्तवास में अर्जुन ने परशुराम से भी अस्त्र-शिक्षा प्राप्त की। इसी बीच उलूपी नामक एक नागकन्या से उनका प्रेम हो गया, जिससे इरावत नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। मणिपूर के राजा चित्रभानु की पुत्री चित्रांगदा से भी उन्होंने विवाह किया था, जिससे बभ्रुवाहन की उत्पति हुई, जो चित्रभानु के निस्संतान दिवंगत होने पर उनका उत्तराधिकारी बना। अर्जुन का विवाह श्री कृष्ण की भगिनी सुभद्रा से भी हुआ था, जिसका होनहार पुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह के युद्ध में अकेला सप्त महारथियों द्वारा निर्दयता से मारा गया था। द्रौपदी के गर्भ से जो पुत्र पैदा हुआ था, वह अश्वत्थामा के द्वारा महाभारत के युद्ध में अंतिम दिन बीरगति को प्राप्त

हुआ। अर्जुन के पराक्रम से प्रसन्न होकर कई देवताओं ने उन्हें दिव्य शस्त्र प्रदान किए थे। युधिष्ठिर द्वारा जुए में साम्राज्य गँवा देने पर अर्जुनतपस्या करने हिमालय पर चले गए, जहाँ उनसे किरात रूपधारी शिव से युद्ध करना पड़ा। किंतु जब इनको उनके असली स्वरूप का ज्ञान हुआ तो इन्होंने शिवजी का अभिनन्दन किया, जिससे प्रसन्न होकर शिवजी ने इन्हें पाशुपत अस्त्र प्रदान किया। इसी प्रकार देवाधिदेव इन्द्र से भी इन्हें कई युद्धास्त्र प्राप्त हुए थे। कृष्ण की सहायता से खाण्डव वन जलाकर अजीर्ण रोगग्रस्त अग्निदेव को भी इन्होंने प्रसन्न किया था। उनकी कृपा से आग्नेयास्त्र और गाण्डीव की प्राप्ति हुई थी, जिसकी टंकार से श्रवणमात्र शत्रुओं के छक्के छूट जाते थे। अमरावती में इन्द्र के साथ विहार करते समय उर्वशी इन पर मोहित हो गई थी, किन्तु उसकी कामवासना संतुष्ट करने में असमर्थता प्रकट करने के कारण उसने इनको नपुंसक होने तथा स्त्रियों के बीच नृत्य करने का श्राप दे दिया था। फलस्वरूप अज्ञातवास के समय 'वृहन्नला' नाम से इन्हें विराट राजकुमारी उत्तरा को नृत्य की शिक्षा भी देनी पड़ी थी। अन्त में कौरवों के विरुद्ध कुरुक्षेत्र में पाण्डवों का घोर संग्राम हुआ, जिसमें स्वयं कृष्ण-अर्जुन के सारथी बने। युद्ध में इन्होंने शत्रु पक्ष के सहस्रों

योद्धाओं का वध किया-जिनमें भीष्म, सुशर्मन्, जयद्रथ, कर्ण तथा अश्वत्थामा जैसे महावीर भी थे। युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर ने विराट अश्वमेध किया, जिसके उपलक्ष्य में अर्जुन ने दिग्विजय यात्रा करके अनेक राष्ट्रों को पराजित किया। इनके और नाम है—अर्जुन, गुडाकेश, धनञ्जय, विष्णु, किरीटिन, पाकशासनि, फाल्गुन, सव्यशाचिन, पार्थ, बीभत्सु, तथा श्वेतवाहन आदि।

**राजा परीक्षित**=अर्जुन के पौत्र तथा अभिमन्यु के पुत्र। इनकी माता का नाम उत्तरा था। महाभारत के बाद यही चक्रवर्ती सम्राट हुए। कलि इन्हीं के समय से पृथ्वी पर आया। व्यास द्वारा रचित भागवत, उन के शिष्य सूत द्वारा ऋषि समूह को अध्ययन करवाया। वही भागवत व्यास शिष्य शुकदेव द्वारा 'सप्ताह पारायण' में इन्हे श्रवण करवाया गया था। इनकी मृत्यु श्रृंगी ऋषि के शॉप के कारण तक्षक के काटने से हुई।

**शुकदेव**=भारत के सबसे महान् पौराणिक कथाकार। अल्पावस्था में ही पूर्ण तत्त्वज्ञानी होने के कारण ऋषियों में ये अग्रणी गिने जाते हैं। ये व्यास के पुत्र हैं। शिव जब पार्वती को अमर होने के लिए विष्णु सहस्रनाम का उपदेश दे रहे थे, उस

समय उस कथा को एक शुक भी सुन रहा था। शिव को जब पता चला तो उन्होंने उसका पीछा किया। उसी समय व्यास-पत्नी अपने आँगन में खड़ी हो अँगड़ाई ले रही थी। उनको देख शुक-शरीर छोड़ ये उनके पेट में चले गये और 12 वर्ष तक वहीं रहे। व्यास महाभारत तथा गीता आदि अपनी पत्नी को सुनाते थे। इस प्रकार गर्भ में ही शुक तत्त्वज्ञानी हुए। भगवान ने इन्हें गर्भ में ही वचन दिया कि संसार की माया तुम्हें नहीं व्यापेगी। कालांतर में राजा परीक्षित को भागवत इन्होंने ही सुनाई। व्यास के पुत्र (शुकदेव) जिन्होंने राजा परीक्षित को श्री मद्भागवत की कथा सुनायी थी। हरिवंश तथा वायुपुराण में इनकी कथा मिलती है। अग्निपुराण को प्रजापतिसर्ग नामक अध्याय में भी शुक की कथा पायी जाती है। देवीभागवत (1.14.123) में एक दूसरे प्रकार से शुक की कथा दी हुई।

**जनकराय**=अपने अध्यात्म तथा तत्वज्ञान के लिए प्रसिद्ध एक विख्यात पौराणिक राजा, जो राजा निमि के पुत्र थे। एक समय निमि ने कई सौ वर्षों में समाप्त होनेवाले एक महायज्ञ की तैयारी की और उसका पौरोहित्य करने के लिये वशिष्ठ से अनुरोध किया, परन्तु उस समय वह इन्द्र के यज्ञ में व्यस्त थे। वशिष्ठ ने उनसे इन्द्र का यज्ञ पूरा हो जाने तक के

लिए रुक जाने को कहा। निमि मौन रहे और वहाँ से चले आये। वसिष्ठ ने समझा कि निमि ने सुझाव मान लिया, पर निमि ने गौतम आदि ऋषियों की सहायता से यज्ञ आरम्भ कर दिया जिससे रुष्ट हो वसिष्ठ ने इन्हें शाप दिया, प्रत्युत्तर में निमि ने भी शाप दिया। दोनों के शरीर भस्म हो गये। ऋषियों ने एक विशेष उपचार से निमि निस्संतान मन्थन से अरणि से इनके शरीर का मंथन किया, जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। मृतदेह से उत्पन्न होने के कारण यही पुत्र जनक कहलाया। शरीर मंथन से उत्पन्न होने के कारण इनका एक नाम मिथि भी पड़ा। इन्होंने ही मिथिलापुरी बसाई। इनकी सन्तान में इक्कीसवीं पीढ़ि में सीरध्वज जनक उत्पन्न हुये जिनकी कन्या सीता थी, जो रामचन्द्र की पत्नी हुई। राजा निमि का वास सबकी पलकों पर माना जाता है।

**अष्टावक्र**=महाभारत के अनुसार ये कहोड़ नामक ब्राह्मण के पुत्र थे। कहोड़ ने अपना विवाह अपने गुरु महर्षि उद्दालक की पुत्री सुजाता के साथ किया था। अष्ठावक्र के संबंध में यह कथा प्रचलित है कि इन्होंने गर्भावस्था ही में अपने पिता को अशुद्ध वेद पाठ करने के लिए टोक दिया था। पिता ने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि भूमिष्ठ होते ही उसका शरीर वक्र हो

जाय। आठ स्थानों पर टेढ़ा होने के कारण उनका नाम 'अष्टावक्र' पड़ा। शरीर से टेढ़े होने पर भी इनकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। बारह वर्ष की अवस्था में ही इन्होंने मिथिला के राजपंडित को शास्त्रार्थ में पराजित कर अपने मृत पिता का जीवनोद्धार किया, जो उक्त पंडित से हारने के कारण जल में डुबा दिये गये थे। अतुल धन-संपति के साथ लोटते हुए मार्ग में उन्होंने अपने पिता के आदेशानुसार समंगा नदी में स्नान किया, जिससे उनके शरीर की वक्रता भी जाती रही। मिथिला के राजपंडित से जो प्रश्नोत्तर हुए थे, वे 'अष्टावक्र संहिता' में संगृहीत हैं।

**यदुराय**=देवयानी के गर्भ से उत्पन्न महाराज ययाति के ज्येष्ठ पुत्र। इनके छोटे भाई का नाम तुर्वसु मिलता है। उनके पिता ने अपने श्वसुर शुक्राचार्य के शॉप से जराग्रस्त होकर एक बार इनसे कहा था कि मुझे अपना यौवन दे दो। एक सहस्र वर्ष भोग करने के बाद मैं उसे तुम्हें वापस कर दूँगा। इन्होंने इस विषय में नकारात्मक उत्तर दिया था, जिससे क्रोधित होकर इनके पिता ने कहा था, तुम्हारा तथा तुम्हारे वंशजों का आज से राज्य पर कोई अधिकार नहीं होगा। इनके पिता ने अपने राज्य का दक्षिण भाग इन्हें दिया था, उस पर इन के वंशजों ने

भी राज्य किया। कृष्ण का जन्म इन्हीं के वंश में हुआ था।यही यादव जाति के प्रथम पुरुष कहे जाते हैं।

**दत्तात्रेय**=आगमवर्ग की प्रत्येक संहिता प्रारम्भिक रूप में किसी सम्प्रदाय की पूजा या सिद्धान्त का वर्णन उपस्थित करती है। दत्तात्रेय की पूजा इस नाम की 'दत्तात्रेय संहिता' में उपलब्ध है। दत्तात्रेय को मानभाउ सम्प्रदाय वाले अपने सम्प्रदाय का मुख्य आचार्य कहते है तथा उनकी पूजा करते हैं। दत्तात्रेय की अस्पष्ट मूर्तिपूजा छाया रूप में मानभाउ सम्प्रदाय के इतिहास के साथ संलग्न रही है।

दत्तात्रेय को ऐतिहासिक संन्यासी मान लिया जाय तो अवश्य ही वे महाराष्ट्र प्रदेश में हुए होंगे तथा यादगिरि (मेलकोट) से सम्बन्धित रहे होंगे। जैसा नारदपुराण में उल्लिखित है, उन्होंने मैसूर स्थित यादव गिरि की यात्रा की थी। संप्रति उनका प्रतिनिधित्त्व तीन मस्तक वाली एक संन्यासी मूर्ति से होता है और इस प्रकार वे त्रिमूर्ति भी समझे जाते हैं। उनके साथ चार कुत्ते एवं एक गाय होती है, जो क्रमशः चारों वेदों एवं पृथ्वी के प्रतीक है। किन्तु मानभाउ लोग उनको इस रूप में न मानकर विष्णु का अवतार समझते हैं।

'परमहंस-संहिता' के रूप में प्रतिष्ठित 'श्री मद्भागवत' महापुराण के एकादश स्कंध को 'मुक्ति स्कंध' कहा गया है। इसी मुक्ति स्कंध के सातवें अध्याय से 'उद्धव-गीता' का आरंभ होता है और इसी आरंभ में 'अवधूतोपाख्यान' दिया गया है। जिसके अंतर्गत दत्तात्रेय यदु राजा को अपने उपदेश देते हुए अपने चौबीस गुरु तथा उनसे प्राप्त सार-बोध का वर्णन करते हैं। इस 'अवधूतोपाख्यान' का हिन्दी में काव्यमय रूपान्तर व्याख्या सहित 'श्रीदत्तगुरु चौंवीस गुरु' में किया गया हैं, अवधूत दत्तात्रेय ने अपने 24 गुरुओं से जो सार बोध प्राप्त किया था, वह संक्षेप में इस प्रकार है –

| *क्रम गुरु का नाम* | *सार बोध* | |
|---|---|---|
| 1. पृथ्वी- | सहनशीलता | धैर्य, क्षमा |
| 2. वायु- | गतिशीलता | प्राणदान |
| 3. आकाश- | निर्लेपिता | व्यापकता |
| 4. जल- | निर्मलता | शीतलता |
| 5. अग्नि- | प्रकाशशीलता | पवित्रता |
| 6. चन्द्र- | तटस्थता | स्वस्थता |
| 7. सूर्य- | तेजस्विता | तपस्या |

8. कपोत- कुटुम्ब प्रेम मोहमुक्ति
9. अजगर- सहजिकता दैवगति-प्रारब्ध
10. सागर- गहनता गंभीरता
11. पतंगा- रूक्षा शक्ति का त्याग
12. भ्रमर- गंधा शक्ति का त्याग
13. हाथी- स्पर्श शक्ति का त्याग
14. हिरन- शब्द राग-शक्ति का त्याग
15. मछली- रसा शक्ति का त्याग
16. शिकारी- चतुरता कार्यदक्षता
17. पिंगला- काम शक्ति का त्याग
18. टिड्डी- प्रिय वस्तु का त्याग
19. बालक- निर्दोषता, निराभिमान
20. कुमारी- एकनिष्ठा
21. लोहार- ध्येय निष्ठा
22. साँप- निःसंगता, गृह निर्माण अनाशक्ति
23. मकड़ी आत्म निर्भरता
24. कीट भृंगी ध्यानलीनता

(कुण्डलिया छन्द)

वायु नभ जल पृथ्वी, अग्नि चन्द मृग सूर।
अजगर कबूतर गज गुरु, भँवर पतंग सिन्धु पूर॥
भँवर पतंग सिन्धुपूर, मच्छली शिकारी लोहार।
पिंगला टीडी बालिका, मकड़ी कुमारी सार॥
कीट टीड़ी गुरु सारले, दतात्रय गुरु भर आयु।
'रामप्रकाश' गुण ग्रहण कर, निष्फन्द रहता वायु॥

अवधूत दत्तात्रेय के 24 गुरुओं में स्थावर–जंगम, पशु-पक्षी, मनुष्य-जंतु आदि सभी वर्ग के प्रतिनिधि देखने को मिलते है। उन्होंने हाथी से लेकर छोटे-से कीड़े को भी 'गुरु' के समान आदर दिया है और उनसे कुछ सीखने का प्रयत्न किया है।

**जीयाराम**=श्रीवैष्णव विशिष्ठाद्वैतानुरागी वैराग्य भूषण रामानन्द प्रवर ज्ञान दीक्षित की अग्रद्वारा धर्मनुगत के अन्तर्गत निर्गुण धारा में समर्थ श्री स्वामी सन्तदास जी महाराज गूदड़ सिद्ध सन्त राजस्थान में प्रसिद्ध हुए। जिन की शिष्योपशिष्य की गुरु-शिष्य परम्परानुगत कई शाखाऐं प्रचलित हुई। शिष्य प्रणाली में विरक्त स्वामी श्री दौलतराम जी महाराज के शिष्य स्वामी श्री गंगाराम जी महाराज द्वारा वि. सं. 1929 में श्री

वैष्णव विरक्त गूदड़ गद्दी जोधपुर को स्थापित करके अपने परम शिष्य स्वामी हरिराम जी महाराज 'वैरागी' को गद्दीधर बना कर आप चम्बलनदी तट कोटा में 'श्री राम आश्रम' में तपोनष्ठ जीवन में रहे। श्री वैष्णव विरक्त गुदड़ गद्दी में स्वामी हरिराम जी महाराज 'वैरागी' के परम भागवत विरक्त सन्त 1. स्वामी जीयाराम जी, 2. स्वामी विश्वदेव जी 'दूधाधारी, 3. स्वामी मुरली धरजी, 4. स्वामी हीरालाल जी, 5. स्वामी नेनुराम जी, 6. साध्वी मीरा बाई जी, 7. स्वामी आत्माराम जी आदि सात शिष्य प्रसिद्ध हुए। जोधपुर के इर्द-गिर्द साात स्थानों के अधिपति रहे। विरक्त सन्त शिष्य स्वामी जीयाराम जी महाराज 145 वर्ष की परमायु पाकर वि. सं. 1959 मार्गशीर्ष शुक्ल 12 रविवार को साकेतवासी हुए। आपके ज्ञान दीक्षित शिष्यों में 1. स्वामी सुखराम जी महाराज, 2. स्वामी बनानाथ जी महाराज और 3. साध्वी नौजराम (नौजबाई) हुए। आपने जोधपुर जिले के किसी गाँव निवासी सुथार परिवार में जन्म लिया था, परिचय अज्ञात है।

**स्वामी बनानाथ जी महाराज**–आपका जन्म सद्ग्रहस्थ नाथ (योगी) घराने में जोधपुर नगर में ही हुआ था। आप हठयोग प्रवीण परम नैष्ठिक ज्ञानी महात्मा थे। उन्हीं के द्वारा

'बनानाथ अनुभव प्रकाश' ग्रन्थ की रचना प्रसिद्ध एवं सर्वत्र उपलब्ध है। प्रस्तुत परवाणा योग सिद्ध प्रमाणिक अनुभव है, जिसकी भावार्थी टीका जनता जनार्दन के समक्ष दी गई है।

*भावार्थ*– जिस प्रकार जो ज्ञान तत्त्व पुरुषोत्तम श्री कृष्ण ने अपने सखा-शिष्य अर्जुन को शिक्षा-दीक्षा में दीया। श्री मद्भागवत महापुराण के माध्यम से राजा परीक्षित को परम त्यागी तत्वदर्शी शुकदेव मुनि ने जो कहा। जो ज्ञान मतिमान धैर्यवान जनकराय ने सतगुरु अष्ठावक्र महर्षि द्वारा प्राप्त किया गया।

परम ज्ञानी तत्वदर्शी फकरवृति के देवावतार दत्तात्रय द्वारा राजा यदुराय को युक्ति साधन दीया। इसी प्रकार सत्य रूप सतगुरु स्वामी जीयाराम जी ने सत्य उपदेश हमे दीये। स्वामी बनानाथ जी महाराज ने यथार्थ एवं प्रमाणिक तथ्य का परवाणा कथन किया, जिस में रति भर भी अन्तर्गत अन्तर्भेद नही रखा, जो काव्य सहित भावार्थी टीका में प्रस्तुत है।

*(दोहा छन्द)*

**साधु सती अरु सूरमा, जो जन लेसी जाण।**
**अभिमानी उन जीव का, कबहूँ न होय कल्याण ॥51॥**

**परवाणा प्रतीत ले, समझे सुरत लगाय।**
**बनानाथ वह प्राणिया, सहज मुक्त हो जाय॥52॥**

*शब्दार्थ*– **साधु**=धार्मिक जीवन बिताने वाला व्यक्ति, सज्जन, धार्मिक, साधु, महात्मा, सन्त, साधन करने वाला, साधन रत। **सती**=साध्वी, पतिव्रता, सत्य का निर्वाह करने वाला, सत्यव्रती। **जती**=इन्द्रियजीत, समित जीवन वाला यति। **सूरमा (शूरवर)**=अच्छा वीर, योद्धा, बहादुर, मन-इन्द्रिय विजेता, इन्द्रिय जीत, संयम-नियम वाला, दानवीर, धर्मवीर, ज्ञानवीर। **जन**=भक्ति-भाव, श्रद्धा-विश्वास धारण करने वाला, उत्तम जिज्ञासु, मुमुक्षू-भक्त। **अभिमानी**=गर्वित, गर्व-अहंकार, घमण्डी, गर्वोन्मत, विद्या धन एवं बल के गर्व से मन्दता आती है और अमर्यादित अनिष्ठ डेरा डालते है। जैसे प्याले से ज्यादा चाय, बर्तन के अनुपात से विशेष वस्तु उडेलने पर वह बहने लगती है। चाकू पर ज्यादा धार करने से वह कुन्द हो जाता है। **परवाणा**=आज्ञापत्र, निर्देश, यथार्थ एवं सत्य बात, प्रमाणिक सीमा, प्रमाण, परवाणा। **प्रतीत**=निश्चित विश्वास या धारणा, ख्याति, प्रसिद्ध, प्रसन्नता, जाना हुआ। **सहज**=स्वाभाविक, सरल, सुगम, साधारण।

*भावार्थ*– इस प्रस्तुत प्रमाणिक अभिलेख, निर्देश अर्थात् यथार्थ कथन रूप परवाणा को मुमुक्षू आत्मग्राही साधु-सन्त जती-सती और सूरवीर सात्विक धैर्यवान भक्तजन विधि पूर्वक पठन-पाठन अथवा साधना पथ से ठीक वास्तिविक ज्ञान से जान लेंगे, उन का अवश्य कल्याण होगा, किन्तु गर्वशील अभिमानी जीव का कभी त्रियकाल में भी कल्याण नहीं हो सकता। विश्वस्त धारणा से मन-बुद्धि सुरत-शब्द की श्रेणी से विचार पूर्वक परवाणा पर श्रद्धा रख कर समझ लेगा। स्वामी बनानाथ जी महाराज कथन करते है कि वह महामानव युक्ति धारक प्राणी जन सहजतया बिना परिश्रम (अन्येतर उपाय हीन) भी भव-क्रम अथवा कर्म बन्धन अर्थात् अज्ञान से मुक्त परमानन्द मय हो जायेंगे।

*(कुण्डलिया छन्द)*

**सम्वत उगणीसै अठ्टारवे, सतगुरु पड़ी पिछाण।**
**तिथि तेरस थिरवार में, मुख भाख्या परवाण।।**
**मुख भाख्या परवाणा, ज्ञान रवि ज्यों दरस्या।**
**भ्रम निशा भई नाश, सत आतम पद परस्या।।**
**सत सतगुरु सब शिष्य है, एहि गुरु शिष्य की मत।**
**'बनानाथ' निश्चय भई, उगणीसै सम्वत।।53।।**

*शब्दार्थ* – **भाख्या**=कहा, कथन किया, वर्णन हुआ, कह दिया। **वेद अन्त**=वेदान्त, वेद के अन्तिम निर्णय का सार तत्व, ब्रह्म विद्या, छः दर्शनों में से एक, जिसमें परमार्थिक सत्ता का विवेचन है, अद्वैतवाद, उपनिषद् सिद्धान्त, विशिष्टाद्वैत। **सिद्धान्त**=विचार एवं तर्क सहित निश्चित किया हुआ मत, विद्वानों द्वारा प्रतिपादित निष्पादित एवं स्थापितमत, तत्वार्थ वाद, ऋषि-सन्त महर्षियों आदि द्वारा निर्णीत उपदेश।

*भावार्थ*– स्वामी बनानाथ जी महाराज अपने शरीर के साथ आध्यात्मिक साधन प्रवेशादि का परिचय दर्शन देते है कि–वि. सं. 1918 तिथि तेरस, शनिवार में सतगुरु शरणापन से आत्मयोग की पहचान हुई और स्वमुख से प्रस्तुत परवाणा का कथन किया।

गुरु कृपा और साधना के माध्यम से सूर्य-प्रकाश के समान अज्ञानान्धकार निवृति पूरक ज्ञान आदित्य का दर्शन हुआ। भ्रम-निशा (रात्री) का नाश हुआ और सत्य आत्मतत्व का साक्षात्कार हुआ। सत स्वरूप सतगुरु ही ज्ञान तत्त्व द्रष्टा है, अन्येतर सभी शिष्य भाव से भावुक मुमुक्षू जन है। यह गुरु और शिष्य की विचार धारा की परख है। यह उपयुक्त तिथि

संवत् में अथवा मत-पन्थ सें निबर्न्धन हो, गुरु मुख से श्रवण कर स्वामी-सेवक के द्वन्द रहित सभी का नाथ बन कर समर्थ तत्व का निश्चय किया।

*इति स्वामी श्री बनानाथ जी महाराज कृत परवाणा समाप्त*

*सम्वत युग नभ रस सिद्धि, कर्क मास शनिवार।*
*तिथि पूर्णिमा सम्पन्नता, रामप्रकाश विचार॥*
*रामप्रकाश विचार, भावार्थी टीका मानी।*
*अन्वय शब्दार्थ लायके, जिज्ञासु के हित जानी॥*
*गुरु वाणी कल्याण प्रद, किया सटीक मत सत।*
*'उत्तमराम' गुरु महर से, 'परवाणा' सम्वत्॥*

❖ ❖ ❖

पेज मे खाली जगह पर लगाना है । 1:12 pm

श्री बनानाथ उपदेश लियो , सतगुरू जीयाराम विचारे । परवाणा मे वर्ष तिथी कह , भूल गये महिना सारे ।। उन्नीस अठारह आषाढ़ वदि तेरस , मिथुन सँक्रान्ति मृगशिरा धारे । रामप्रकाश करे पद वन्दन , शोध कियो इतिहास सुधारे ।।१।। तारीख ~ 6-7-1861 ई. * शक: 1783 उतरायण . 1:12 pm

ॐ

*श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः*

श्री श्री 108 श्री स्वामी उत्तमरामजी महाराज 'वैरागी' कृत

## श्री अमर पट्टा (मुक्ति छाप) प्रारम्भ

सत गुरु हरि हर सन्त रु नूरा, एक स्वरूप सदा भरपूरा।
नमो नमो अष्टांग प्रमाणा, वार अनंत अनंत नमामा ॥1॥
सतगुरु ब्रह्म स्वरूप कहाई, नमस्कार गुरुदेव सदाई।
सतगुरु सामर्थ सिरजण हारा, जाकी महिमा अगम अपारा ॥2॥
सत गुरु स्वामी अलख गोसांई, ताकि महिमा कहि ना जाई।
सतगुरु करी कृपा सुखदाई, ताते अमर पटा कहुँ गाई ॥3॥
प्रथम जाय नमा गुरु चरणे, साधन संग गुरु के शरणे।
विश्व आशक्ति सुरती तोड़ी, गुरु वचनों में सहजे जोड़ी ॥4॥
विनती बारम्बार उचारी, सुन हो सतगुरु दीन पुकारी।
यह जग मिथ्या सार ना काई, भूल भ्रम में शठ भटकाई ॥5॥
झूँठ जान सब लीया शरणा, भव दुःख काटो जनम रू मरणा।
यासे कष्ट बहू युग पाया, सावधान हो शरणे आया ॥6॥

आप बिना जग में नहिं कोई, जासे ज्ञान ब्रह्म का होई।
दया करो दयाधर स्वामी, आप सर्व के अन्तरयामी ।।7 ।।
कृपा करी दी युक्ति बताई, सोजी पाय कहूँ अब गाई।
तन मन शीश दीया गुरु आगे, जमका जोर कछू नहिं लागे ।।8 ।।
सतगुरु हाथ दीया वर माथे, सोहं शब्द गुरु दीया साथे।
ओम सोहं निज आतम ज्ञाना, मुक्त पट्टा यह गुरु बखाना ।।9 ।।
'अमर पट्टा' सतगुरु लिख दीना, शिर साटे सत कर में लीना।
ताके साथ युक्ति इक दीनी, जाने सन्त रेश महा झीनी ।।10 ।।
सतगुरु शब्द बखाना आदू, रीत कही पुनि जाने सादू।
'अचलराम' गुरु सत पाया, अमर पट्टा निज ज्ञान बताया ।।11 ।।
ब्रह्मवेता सतगुरु फरमाया, सोहं सुमिरण करो सवाया।
सत शब्द सतगुरु उचारा, सुन लो सत संग सार पुकारा ।।12 ।।

*श्री सतगुरु वाक्य ! शिष्य प्रति विश्वास*
*अमर पट्टा साधन व महिमा निरूपण*

प्रकट वचन साचो लख गाई, भजन कीयों से काल न खाई।
नाम जपे सोई मुकित पावे, अमर पट्टा बिन मुक्ति न थावे ।।13 ।।
यामे फेर सार नहिं कोई, नाम बिना निज मोक्ष न होई।
'अमर पट्टा' अचल निज ज्ञाना, संत स्मृति दे परवाना ।।14 ।।

ज्ञानी ओम रु सोहम् ध्यानी, भक्त जपे सत राम निशानी।
ओ3म् सोहम् राम जप तीनो, गुरु गम मुक्ति पद को चीनो ॥15॥
नाना संशय काम भ्रम मूरा, डार टार कर चित ते दूरा।
रंचक भेद न विस्मत होऊ, राम ओह्म सों एक, न दोऊ ॥16॥
'अमर पट्टा' निर्भय निर्वाणी, मिटे चौरासी चारो खाणी।
'अमर पट्टा' से राखे हेता, ताको यम दगा नहिं देता ॥17॥
हंसा पकड़े सत का डोरा, तब यम करे नहिं कुछ तोरा।
सोहं सुरती तार मिलावो, त्रिवेणी तख्त में ध्यान लगावो ॥18॥
इड़ा पिङ्गला सुषमण सोजो, ओम सोहं संग स्वासा खोजो।
स्वासा सुमिरण ध्यान लगावो, सहजे दर्शन ब्रह्म मिल जावो ॥19॥
अव हंसा आवे ना जावे, अगम देश में उलट समावे।
यथा साधना प्रकट सुनाई, भव का भय व्यापे ना काई ॥20॥

## अथ हृदयोल्लास वाणी सुधा निरूपण

सतगुरु 'अचलराम' अनकरता, जम जोरावर जासें डरता।
सतगुरु वचन निर्भय का भाखा, 'उत्तमराम' कहूँ सत साखा ॥21॥
सतगुरु स्वामी युक्ति बताई, सत प्रतीत पलक में पाई।
सतगुरु दीवी युक्ति ऐसी, करी साधना गाऊँ तेसी ॥22॥
सतगुरु देव दीया फरमाई, करुं साधना मन चितलाई।
यह दृढ़ धार करी दृढ़ फेरी, सोहं शब्द स्वास में टेरी ॥23॥

'सतगुरु' सोहं नाम सुणायो, सो निज सहजे हरदम ध्यायो।
युक्ति युत सोहं निज ध्याया, जासे हंसा पार पठाया ॥24॥
इड़ा पिंगला सुषमण सीधी, सुरत शब्द तीनो में बींधी।
पांचो मिल एकता पाई, सत नाम की फिरी दुहाई ॥25॥
नाभि कँवल में लागी डोरी, स्वासा सुरत चढी तब मोरी।
गुरु प्रसाद खुली उर ताड़ी, सुरती पकड़ त्रिकूटी चाड़ी ॥26॥
पूरक कुम्भक रेचक भीना, प्राणायाम युक्ति सब चीना।
त्रिवेणी कँवल में ज्योति जागी, दर्शण होते दुर्मति भागी ॥27॥
सत देश का दर्शण पाया, उज्वल हंसा निर्मल थाया।
सत नाम की डोरी झेली, हंसा खेलत निर्भय हेली ॥28॥
'अमर पट्टा' कस कमर बाधा, अगम देश का मार्ग लाधा।
यासे हंस चल्यो जब आगो, अगम देश के रस्ते लागो ॥29॥
अगम देश का रस्ता आदू, निगम देश में पहूँचे सादू।
गगन मण्डल का मार्ग बंका, वहाँ भी जाय लगाया डंका ॥30॥
गगन मण्डल में निर्भय पूगा, सुन में भानू असंख्य ऊगा।
सत रूप का सोहं उज्वाला, ऊँच नीच कूँची ना ताला ॥31॥
पानी बिना ताल परि पूर्ण, हँस अनन्त मिले परि तूर्ण।
ता पर बाग बगीचा देखा, वर्षाधार नितो नित पेखा ॥32॥
मोर चकोर गर्जे घनघोरा, सारंग राग पपैया सोरा।
बाजा अनहद घुरि अलगूँजा, राम रहीम एक कर सूजा ॥33॥

राग छतीसों षट् जो रागा, बिन प्रपंच बजे अनुरागा।
ज्ञान ध्यान बाजन के ऊपर, बाजे अनहद निर्भय नूपर ॥34॥
हरिया बाग छबि लख पाई, जीव ईश का भेद विलाई।
बाग रू फल फले घन फूला, तामे व्यापक एक रसूला ॥35॥
अमृत फूल फूले नित रंगा, संग असंग सर्व रस गंगा।
सो साहब सत निरमल नूरा, ऊँच नीच में है भरपूरा ॥36॥
दृष्ट मुष्ट निकट नहिं दूरा, अकल अरूपी आप हजूरा।
घन रस रूप सच्चिदानन्दा, जीव ब्रह्म का रंच न फन्दा ॥37॥
अखण्ड आनन्द स्वरूप विराजा, व्यापक हंस है रंक न राजा।
निरभय रूप भया निज मस्ता, धाम धरा गुण नाहिं रस्ता ॥38॥
सब में पूरण आ ना जावे, ऐसी गति कोई विरला पावे।
शूरा पूरा सन्त सु कोई, ब्रह्म निष्ठी संत पहूँचे सोई ॥39॥
पण्डित काजी ज्ञाता सोई, देख अच्छम्भा डाढे जोई।
पूरा खेल परसे कोई शूरा, लेश अविद्या कर चकचूरा ॥40॥
वक्ता पण्डित भेद न पावे, पोथी थोथी बांच सुनावे।
निज पद माँहि झूलत सन्ता, पण्डित खण्डित होय अनन्ता ॥41॥
कहा कहूँ यह पट्टा परवाना, गूँगा स्वाद कहो को जाना।
'उत्तमराम' ब्रह्म घन पूरण, लवन मिला जल आबन ऊरण ॥42॥

'उत्तमराम' सन्त जाने कोई, सतगुरु पागी पूरा होई।
आवन जावन पन्थ मिटाई, निज पद हंसा रहा समाई ॥43॥
गूंगा स्वप्ना कह नहिं सकता, निज पद में सब ही रंग थकता।
'अचलराम' परम पद पहूंता, 'उतमराम' निर्भय अवधूता ॥44॥
'अचलराम' गुरु सत पाया, अमर पट्टा निज रूप लखाया।
ब्रह्मवेता सत गुरुजी मेरा, मेट दिया भव सिन्धु फेरा ॥45॥
लख चौरासी का बन्धन मेटा, सत सोहं जब हंसे भेंटा।
'अमर पट्टा' सम्पूर्ण जाणो, निज हंसो निर्भय निरवाणो ॥46॥
'अमर पट्टा' सत पूरा भाखा, वेद संत साहिब कह साखा।
'उत्तमराम' सन्त ज्ञान आनन्दी, रूप समाया गूदड़ गादी ॥47॥
तुरिय अतीत रूप निज निष्ठा, सर्व दृश्य का मैं निज द्रष्टा।
'उत्तमराम' कछू साख सुनाई, सत चित आनन्द रूप समाई ॥48॥
कहा कहूँ अब पार न आवे, सन्त सुजान के सेन समावे।
'उत्तमराम' स्वरूप सदाई, 'उत्तमराम' रहे थिर थाई ॥49॥
अपना रूप पिछाने सागी, जाके ज्योति गुरु मुख जागी।
'अमर पट्टा' सम्पूर्ण पूरा, 'उत्तमराम' पूरण इक नूरा ॥50॥

*इति श्री अमर पट्टा (मुक्ति छाप) सम्पूर्ण*

❖ ❖ ❖

ॐ

श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः

स्वामी रामप्रकाशाचार्यजी महाराज कृत काव्य

## गुरु ज्ञान-सम्प्रदाय पंच मात्रा

ॐ सतगुरु शरणा जीवत मरणा, धीरज धरणा कारज करणा।
सतगुरु दीन्हा जीवन आला, पावेगा सतगुरु का बाला ।।1 ।।
भ्रम भेद अँधकार मिटाया, कर्म काट उज्वाला थाया।
सत लखाया सत समाया, सत बिना कुछ मर्म न भाया ।।2 ।।
ज्ञान गूदड़ी टोपी युक्ति, शील कौपिन कंथा कर्म मुक्ति।
संयम क्रिया आडबन्द भाई, कसिया कर्म कमर बन्द लाई ।।3 ।।
सुरति सुई विवेक का धागा, युक्ति थैकलियाँ सीवन लागा।
सतगुरु दर्जी निरत सिलाई, वो पहनेगे सब गुरु भाई ।।4 ।।
सत्य शैली उपराम उपवीता, बटुआ ध्यान गुणन कर गीता।
पांच रंग पंच तत्व लाया, फल शांति का पाठ पढाया ।।5 ।।
दश गज धर्म अंग है चोला, पहने गुरुमुखि बाला भोला।
इच्छा रहित भावना झोली, माला मनन गुरु गम बोली ।।6 ।।
श्वासा सांग अनूप सुहाया, संतदास गूदड़ की माया।
कण्ठी सुमिरण रहनी चादर, श्रद्धा पाटी प्रतीति आदर ।।7 ।।

ब्रह्म अंचला धारे अवधूता, शिवविभूति ब्रह्म अनुभूता।
कफनी मर्यादा पालन करनी, सत संतोष भेष भ्रम जरनी ॥8॥
जाप जांघियाँ लज्जा कर्ण कुण्डल, प्रेम पूजा यश तर्पण मुदग्ल।
निर्भय नगर है मठ निराशा, भोजन भाव जीव अविनाशा ॥9॥
शर्त निर्लेप मोरछल लाया, द्वेष हीन जंग डोरा भाया।
गुण उडयनि स्वाँग सुहाया, अनाहत श्रृंगी नाद बजाया ॥10॥
हरि भक्ति मृगछाला प्यारी, गुरु पुत्र पहने सो ब्रह्मचारी।
त्रिगुण चकमक भाव भोजना, परम अमृतपेय परम योजना ॥11॥
पात्र अपात्र विचार फरूहा, बहुगुणी तूंबा कमंडल किस्तुहा।
गुरुज्ञान का दीपक पाया, ऋद्धि भण्डार स्थिरता माया ॥12॥
अमरत्व दण्ड रु धैर्य कुदाली, तप खड्ग तत्व कर झाली।
बशीकार वैरागण टेका, समद्रष्टी चौगान विवेका ॥13॥
मन का छोड़ा विरक्ति का जीना, प्राणायाम पोलो में दीना।
इडा पिंगला पागड़े फेरा, ईश्वर नाम कँवल से घेरा ॥14॥
सुषुमन से आ डेरा दीया, सीतल साधन भीतर लीया।
अभरा सभरा सतसंत गाया, जीवत ओढ्या मूंआ बिछाया ॥15॥
तत्व जोड़ा वेश बनाया, निर्गुण छाल बल बाण सजाया।
शम दम फर बाणों के लागा, बोद्ध कर्षि संयम शस्त्र जागा ॥16॥

करणी कटार धार कर शूरा, फकर फिरिया विषय गढ पूरा।
माया गढ़ जीतेगा बाला, ब्रह्म पद निज पावे लाला।
स्वागत गुरु मय चेला पावे, निर्मलता धोती को लावे ॥18 ॥
यज्ञोपवीत अखण्ड आनन्दा, सोहं माला सच्ची सन्दा।
गुरु मंत्र की शिखा हमारे, हरि नाम गायत्री धारे ॥19 ॥
स्थिर आसन कबहुँन डोले, सोहं सोहं हरदम बोले।
तिलक पूर्ण ब्रह्म का ध्याना, नहीं जहाँ ज्ञ ज्ञाता ज्ञाना ॥20 ॥
सन्ध्या निर्वैरता धारी, ब्रह्मानन्द का भोग लगारी।
ब्रह्म प्रीति पीताम्बर धारा, छाप साक्षात्कार सुधारा ॥21 ॥
ममता की मृगछाल बिछाई, तापर बैठे सब गुरु भाई।
पंचकेशी जब पास हमारे, पाँचों बैरी कस कस मारे ॥22 ॥
चिंतन चेतन साक्षी पूरा, 'उत्तमराम' निरखे गुरु नूरा।
घटे बढे नहीं नित सवाया, नौ का अंक स्थिर रहवाया ॥23 ॥
कोई अकेला अंकगण लीजें, छः से गुण कर, नौ संग दीजे।
भाग तीन के भजन फल आवे, तामे पन्द्रह अंक मिलावे ॥24 ॥
जोड़ ताहि भाग दो दीजे, भजन फल सुविधा लख लीजे।
ताते लिया अंक कम कीजे, शेष अटल अंक नौ लखीजे ॥25 ॥

'रामप्रकाश' उत्तम का शरणा, साधु जीवन भव से तरणा।
यो पूरे सतगुरु का बाला, एक सौ आठ श्री का रखवाला ।।26 ।।
नामाक्षर गनि चौगुन करना, पांच मिलाय दुगुना धरना।
भाग आठ से शेष रहावे, रमता राम सो उत्तम लखावे ।।27 ।।
'रामनन्द' श्री राम दुहाई, 'राघवप्रसाद' सदा मन भाई।
साधु अखारा कोई न छेरे, जो छेड़े जा भव के फेरे ।।28 ।।
'रामप्रकाश' पंच मात्रा गावे, साधु रक्षा सदाई पावे।
सर्गुण निर्गुण सूक्ष्म स्थूला, सब उपाधि निबरे मूला ।।29 ।।
'उत्तमराम' गुरु वर ज्ञानी, ब्रह्मवेता ब्रह्मरूप अब़ानी।
'रामप्रकाश' गुरु मय होई, उत्तम 'रामप्रकाश' ह़ै सोई ।।30 ।।

❖ ❖ ❖

ॐ

*श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः*

## गायत्री पाठ संग्रह

राम गायत्री–ॐ दशरथ नन्दनाय विद्महे सीता वल्लभाय।
धीम हि तन्नो राम प्रचोदयात् ॥1॥

सीता गायत्री– ॐ जनकनन्दन्यै विद्महे भूमिजायै।
धीमहि तन्नो सीता प्रचोदयात् ॥2॥

लक्ष्मण गायत्री– ॐ दशरथनन्दनाय विद्महे ऊर्मिलाप्रियाय।
धीम हि तन्नो लक्ष्मण प्रचोदयात् ॥3॥

हनुमान गायत्री– ॐ अञ्जनीगर्भाय विद्महे वायु पुत्राय।
धीमहि तन्नो हनुमत प्रचोदयात् ॥4॥

कृष्ण गायत्री– ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय।
धीमहि तन्नो कृष्ण प्रचोदयात् ॥5॥

राधा गायत्री– ॐ वृषभानुजाय विद्महे कृष्ण प्रियाय।
धीमहि तन्नो राधिका प्रचोदयात् ॥6॥

ब्रह्म गायत्री– ॐ भूर्भुवःस्वःतत्सवितुर्वरेण्य भर्गोदेवस्य।
धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॥7॥

विष्णु गायत्री– ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय।
धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥8॥

लक्ष्मी गायत्री– ॐ महालक्ष्मी विद्महे विष्णुप्रियाय।
धीमहि तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात् ॥9॥

रुद्र गायत्री– ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय।
धीमहि तन्नो रुद्र प्रचोदयात् ॥10॥

गिरिजा गायत्री– ॐ गिरिजायै विद्महे शिवप्रियाय।
धीमहि तन्नो पार्वती प्रचोदयात् ॥11॥

गोपाल गायत्री– ॐ गोपालाय विद्महे गोपीजनवल्लभाय।
धीमहि तन्नो गोपाल प्रचोदयात् ॥12॥

गरुड़ गायत्री– ॐ विष्णुदूताय विद्महे स्वर्णपक्षाय।
धीमहि तन्नो गरुड़ प्रचोदयात् ॥13॥

नृसिंह गायत्री– ॐ नृसिंहरूपाय विद्महे वज्रनखाय।
धीमहि तन्नो नृसिंह प्रचोदयात् ॥14॥

दुर्गा गायत्री– ॐ नवदुर्गाय विद्महे सिंहारूढाय।
धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोयदयात् ॥15॥

सरस्वती गायत्री– ॐ सरस्वत्यै विद्महे ब्रह्मपुत्रियै।
धीमहि तन्नो सरस्वती प्रचोदयात् ॥16॥

तुलसी गायत्री– ॐ तुलस्यै विद्महे विष्णुप्रियाय।
धीमहि तन्नो वृन्दा प्रचोदयात् ॥17॥

अग्नि गायत्री– ॐ महाज्वालाय विद्महे अग्निदेवाय।
धीमहि तन्नो अग्नि प्रचोदयात् ॥18॥

रामदेव गायत्री– ॐ अजमलनन्दनाय विद्महे सायरसुताय।
धीमहि तन्नो रामदेवाय प्रचोदयात् ॥19॥

गुरुदेव गायत्री– ॐ ब्रह्मरूपाय विद्महे महाज्ञानाय।
धीमहि तन्नः सद्गुरु प्रचोदयात् ॥20॥

हंस गायत्री– ॐ परमहंसाय विद्महे महाहंसाय।
धीमहि तन्नो जीवात्मे प्रचोदयात् ॥21॥

अश्विनी गायत्री– ॐ वाणीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय।
धीमहि तन्नो अश्विनीकुमार प्रचोदयात् ॥22॥

गणेश गायत्री– ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय।
धीमहि तन्नो गणपतिः प्रचोदयात् ॥23॥

सूर्य गायत्री– ॐ भास्कराय विद्महे कश्यपाय (दिवाकराय)।

धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात् ॥24॥

नारायण गायत्री– ॐ नारायणाय विद्महे शेषशायिने।

धीमहि तन्नो नारायणः प्रचोदयात् ॥25॥

देवी गायत्री– ॐ देव्यै ब्रह्मण्यै विद्महे महाशक्त्यै।

धीमहि तन्नो महादेवी प्रचोदयात् ॥26॥

गोपाल गायत्री– ॐ गोपीजनवल्लभाय विद्महे वासुदेवाय।

धीमहि तन्नो गोपाल प्रचोदयात् ॥27॥

परशुराम गायत्री– ॐ यामदग्न्याय विद्महे महावीराय।

धीमहि तन्नो परशुराम प्रचोदयात् ॥28॥

वृन्दा गायत्री– ॐ तुलसीपत्राय विद्महे महालक्ष्म्यै।

धीमहि तन्नो वृन्दारण्य प्रचोदयात् ॥29॥

सतगुरु गायत्री– ॐ परब्रह्मणे विद्महे परमात्मने।

धीमहि तन्नो सतगुरु प्रचोदयात् ॥30॥

हंस गायत्री– ॐ परमरूपाय विद्महे महतत्त्वाय।

धीम हि तन्नो हंस प्रचोदयात् ॥31॥

वायु गायत्री– ॐ पवनदेवाय विद्महे पंचमुखाय।
धीमहि तन्नो वायु प्राणाय प्रचोदयात् ॥32॥

विश्वकर्मा गायत्री– ॐ विश्वात्मने विद्महे विश्वरूपाय।
धीमहि तन्नो त्वष्ठः प्रचोदयात् ॥33॥

शेष गायत्री– ॐ दशरथये विद्महे अलबेलाय।
धीमहि तन्नो शेषरूप प्रचोदयात् ॥34॥

आकाश गायत्री– ॐ आकाशाय विद्महे नभो देवाय।
धीमहि तन्नो गगनः प्रचोदयात् ॥35॥

गंगा गायत्री– ॐ गङ्गाये विद्महे विष्णुपाद्यै।
धीमहि तन्नो भागीरथी प्रचोदयात् ॥36॥

जल गायत्री– ॐ जलबिम्बाय विद्महे नीलपुरुषाय।
धीमहि तन्नो अम्बु प्रचोदयात् ॥37॥

पृथ्वी गायत्री– ॐ पृथ्वी देव्यै विद्महे सहस्रमूर्तये।
धीमहि तन्नो नारायणी प्रचोदयात् ॥38॥

चन्द्र गायत्री– ॐ क्षीरपुत्राय विद्महे अमृततत्त्वाय।
धीमहि तन्नो तन्नश्चन्द्रः प्रचोदयात् ॥39॥

रामानन्द गायत्री– ॐ पुण्यसदन्यै विद्महे सुशीलासुताय।

धीमहि तन्नो रामानन्दाचार्य प्रचोदयात् ॥40॥

धन्वन्तरी गायत्री– ॐ विष्णवै विद्महे जगतपते।

धीमहि तन्नो धन्वन्तरयै प्रचोदयात् ॥41॥

गोरक्ष गायत्री– ॐ गो गोरक्षनाथाय विद्महे शून्यपुत्राय।

धीमहि तन्नो गोरक्ष निरंजन प्रचोदयात् ॥42॥

सावित्री गायत्री– ॐ सावित्री देवी विद्महे ब्रह्मप्रियाय।

धीमहि तन्नो सती सावित्री प्रचोदयात् ॥43॥

कामाख्या देवी– ॐ कामाक्षा विद्महे त्रिपुरे सुन्दरी।

धीमहि तन्नो ईश्वरी महामाई प्रचोदयात् ॥44॥

होमीयोदेवी गायत्री– ॐ होमीयो देवी विद्महे वज्रहस्ताय।

धीमहि तन्नो आदकुवारी अग्नि प्रचोदयात् ॥45॥

महामंगला पद्मिनी देवी गायत्री–ॐ पद्मिनीदेवी विद्महेमहामंगलाय।

धीमहि तन्नो जोगमाया प्रचोदयात् ॥46॥

मेनावती देवी गायत्री– ॐ मयनावन्ती विद्महे जोगमाया।

धीमहि तन्नो जालंधर प्रियाय प्रचोदयात ॥47॥

उदयनाथ पार्वती गायत्री– ॐ सती पार्वती विद्महे शिव प्रियाय।
धीमहि तन्नो आद शक्ति प्रचोदयात् ।।48 ।।

महाकाली गायत्री– ॐ महाकाली विद्महे ब्रह्म पुत्रीये।
धीमहि तन्नो रुद्र प्रियाये प्रचोदयात् ।।49 ।।

अन्नपूर्णा गायत्री– ॐ अन्नपूर्णाय विद्महे महाशक्ति पूर्णाय।
धीमहि तन्नो अन्नपूर्णा प्रचोदयात् ।।50 ।।

तुलजा भवानी गायत्री– ॐ तुलजा भवानी विद्महे चण्डीकाय।
धीमहि तन्नो जोगमाया प्रचोदयात् ।।51 ।।

बिमलादेवी गायत्री– ॐ बिमला देवी विद्महे सन्तोषी।
धीमहि तन्नो ज्योति स्वरूप प्रचोदयात् ।।52 ।।

हिंगलाजदेवी गायत्री– ॐ हिंगलाज देवी विद्महे महामाई।
धीमहि तन्नो शंकर प्रिये प्रचोदयात् ।।53 ।।

तारा त्रिकुटा गायत्री– ॐ तारा त्रिकुटा विद्महे त्रिदेवी पुत्रीये।
धीमहि विश्वकर्म तोतला प्रचोदयात् ।।54 ।।

ज्वाला देवी गायत्री– ॐ ज्वालाये विद्महे वज्र हस्ताय।
धीमहि तन्नो ज्वाला प्रचोदयात् ।।55 ।।

महा मनसा गायत्री– ॐ महा मनसा देवी विद्महे मनसा धाती।
धीमहि तन्नो अलील प्रिये प्रचोदयात् ॥56॥

ॐ रामानन्दाय विद्महे कृष्ण पयोहाराय।
धीमहि तन्नो अग्रदासाय प्रचोदयात ॥57॥

ॐ अग्रदासाय विद्महे सन्तदासाय।
धीमहि तन्नो उत्तमरामाय प्रचोदयात् ॥58॥

ॐ हरिरामाय विद्महे सुखरामाय।
धीमहि तन्नो उत्तमरामाय प्रचोदयात् ॥59॥

ॐ भीखाराम पुत्राय विद्महे, उत्तमरामशिष्याय।
धीमहि तन्नो रामप्रकाशाय प्रचोदयात् ॥60॥

❖ ❖ ❖

ॐ

श्री हरि गुरु सच्चिदानन्दाय नमः

स्वामी रामप्रकाशाचार्य जी महाराज कृत काव्य

## (1) मंगल योग्य कौन ?

(घनाक्षरी-छन्द)

प्रणाम के योग्य कौन, जग मांहि मान्य जौन।
ताहि को वन्दन नित, प्रणाम विचार है।।
त्यागी सन्त ब्रह्मज्ञानी, विरक्त अवधूत वर।
जपी तपी सात्विक सो, आत्म वित प्यार है।।
सतगुरु परगुरु , परमगुरु परमेश्वर।
परगुरु पूर्वाचार्य, धर्म के आचार है।।
सन्त 'रामप्रकाश' यों, कथन करे वेद सन्त।
प्रणम्य स्वरूप सदा, ताहि नमस्कार है।।1।।
स्वतन्त्रा सैनानी सब, चिन्तित विचलित नाहि।
प्रेरणात्मक सादगी के, जो भी ईमानदार है।।
माता कहिलाऐं सब, पति-पूत भाईयों को।
बहादुरी दान वीर, दिये संस्कार है।।

दानवीर धर्मवीर, कर्मवीर शूरवीर।
तपशील क्षमावान, त्रिकाल में सार है।।
सन्त 'रामप्रकाश' यों कथन करे वेद सन्त।
प्रणम्य स्वरूप सदा, ताहि नमस्कार है।।2।।
अखण्ड सुरक्षा दीवी, एकता में कुरबान।
न्योछावर किये वार, मन किरदार है।।
वंश कुल पूर्वज भी, बलिदैन कर्तव्यकर।
सौभाग्य में सती यति, धर्म धारी सार है।।
सार्वजनिक जीवन में, आदर्शवान ज्ञान वान।
स्वाभिमान खुशहाल, सात्विक कलाकार है।।
सन्त 'रामप्रकाश' यों कथन करे वेद सन्त।
प्रणम्य स्वरूप सदा, ताहि नमस्कार है।।3।।
शास्त्रविद न्यायविद, कवि रू कोविद भी।
भ्रष्टचार हीन घर, पवित्र आचार है।।
भारत संविधान पर, जीवन गौरव शील।
शास्त्रीय जो कलाकार, प्राचीन आधार है।।
विद्वत मनीषी जन, गुरु सेवी सतसंगी।
विरक्त विशेष वर, लिये सुविचार है।।

सन्त 'रामप्रकाश' यों, कथन करे वेद सन्त।
प्रणम्य स्वरूप सदा, ताहि नमस्कार है ॥4॥
सनातन धर्म वृक्ष, सींचे पौषे आचरण।
गर्दिश घिरे रात-दिन, संघर्ष रत धार है॥
अनाचार भृष्टाचार, अन्याय के विरूद्ध हो।
निशि दिन प्रहार, लोहा लेत वार है॥
निडर निर अहंकारी, दम्भ रू पाखण्ड हारी।
मिथ्या को चुनौती भारी, देते रहे मार है॥
सन्त 'रामप्रकाश' यों, कथन करे वेद सन्त।
प्रणम्य स्वरूप सदा, ताहि नमस्कार है ॥5॥
सन्त ज्ञानी गुणी धीर, नेता राजा मन्त्री वीर।
सैनिक किसान हीर, उत्थान उकार है॥
सन्तन को हितकारी, तन मन धन सेव।
समाज उत्थान हेतु, करे उपकार है॥
सात्विक है खान पान, करे जप तप नेम।
आदर्श विचारवान, जन हितकार है॥
सन्त 'रामप्रकाश' यों, कथन करे वेद सन्त।
प्रणम्य स्वरूप सदा, ताहि नमस्कार है ॥6॥

मात पिता गुरु जन, भ्रात मित्र साथ ठगी।
लूट खोस खाय ऋण, जीवे पापाचार है॥
कृतघ्नी गुण चोर, गुरु मर्याद हीन।
नमक हराम करे, जाका मिथ्याचार है॥
धर्महीन कर्तव्य क्षीन, निन्दक हिंसक सदा।
नास्तिक रू क्रोधी लोभी, हीन सदाचार है॥
सन्त 'रामप्रकाश' यों, कथत है वेद सन्त।
ऐसे दुष्ट प्राणियों को, नित ही धिकार है॥7॥
भृष्टाचारी अनाचारी, आलसी अनिष्ठकारी।
खोटी नीत तन मन, जीवे व्यभिचार है॥
गुरु सन्त निन्दक हो, दम्भ रु पाखण्ड भेस।
मिथ्याचारी धृष्ट-कूट, नित अत्याचार है॥
जीवों का शोषण कर, हरे तन मन धन।
यन्त्र मन्त्र तन्त्र धार, करे अभिचार है॥
सन्त 'रामप्रकाश' यों, कथत है वेद सन्त।
ऐसे दुष्ट प्राणियों को, बहुत धिकार है॥8॥

❖❖❖

## (2) शब्द ब्रह्म अष्टक

(1)

शब्द ही ब्रह्म स्वरूप को जानिये, पर-अपर को ज्ञान करावे।
परब्रह्म और अपर ब्रह्म को, परा-अपरा को भेद बतावे॥
शब्द ही दर्शन शास्त्र शब्द ही, शब्द ही गुरु-शिष्य भेद मिटावे।
शब्द को पायके उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥

(2)

शब्द के हाथ न पाँव इन्द्रिय, शब्द सम्भाल के बोल बुलावे।
शब्द से ज्ञान रू ध्यान भक्ति सब, शब्द ही मन्त्र को जाप जपावे॥
शब्द ही गुरुशिष्य भेद बनावत, शब्द सुधार करे यश पावे।
शब्द को पाय के उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥

(3)

शब्द ही सगुण निर्गुण शब्द ही, शब्द ही जीवन मान बढावे।
शब्द ही मुक्ति को भेद बतावत, शब्द ही मुक्त स्वरूप लखावे॥
शब्द ही मुख से छुट गया वह, वापिस आय न यत्न करावे।
शब्द को पाय के उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥

(4)

शब्द अचूक है तीर बराबर, शब्द को घाव न मिटे मिटावे।
शब्द ही मन को घायल करत है, शब्द से मन वशि होय जावे॥
शब्द ही बन्धन मोह को कारक, शब्द ही क्रोध रू काम उपावे।
शब्द को पायके उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥

(5)

शब्द ही सुधारस शब्द हलाहल, शब्द ही प्रेम अनुराग बतावे।
शब्द ही भाव अभाव बतावत, शब्द महान विद्वान बनावे॥
शब्द ही शत्रु रू मित्र उपावत, शब्द ही जग को प्रेम बढावे।
शब्द को पाय के उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥

(6)

शब्द ही कटुता-रोष बढावत, शब्द ही मित्रता-प्रेम बढावे।
शब्द ही मन को तोड़त है अरु, शब्द ही वेद को भेद सो लावे॥
शब्द ही अगम-निगम अनहद, शब्द ही वाणी रु शास्त्र बनावे।
'उत्तमराम' से शब्द को पाय के, 'रामप्रकाश' अभय पद पावे॥

(7)

शब्द साकार स्वरूप रू नाम है, शब्द ही सो निराकार लखावे।
शब्द ही एक अनेक वर्णाक्षर, शब्द ही व्यञ्जन स्वर उपावे॥

शब्द ही द्वन्द-निर्द्वन्द स्वरूप है, शब्द ही ज्ञानि-अज्ञानि में आवे॥
शब्द को पाय के उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥

(8)

शब्द ही क्षर-अक्षर आवर्ण, शब्द बिना नहीं जीवन पावे।
शब्द ही नाम रू रूप सदावत, शब्द बिना नहीं बोध करावे॥
शब्द बिना नहीं द्रश्य अद्रश्य भी, द्रष्ट-अद्रष्ट को बोध विलावे।
शब्द को पाय के उत्तमराम से, रामप्रकाश स्वरूप समावे॥8॥

✤ ✤ ✤

## (3) इष्टनिष्ठा दर्शन का अष्टक

(1)

शैव उपासत है शिव इति, बौध उपासत बुद्ध हमारे।
नैयायिक कर्ता प्रकृति रु ईश्वर, सोई वेदान्ति जो ब्रह्म पुकारे॥
जैन जाहि जिन अरिहन्त शासन, मीमांसक कर्म इति कह सारे।
'उत्तमराम' वही हरि एक है, 'रामप्रकाश' नमामि उचारे॥

(2)

जाहि हरि हर मरुत विद्वज्जन, वेद कर्मोपनिषद् जाहि को गावे।
ज्ञानी योगी जन भक्त ही ध्यावत, जाहि को सुर नर असुर ध्यावे॥

जाहि ते गुण मय सृष्टि रू त्रिगुण, उत्पति स्थिति रू प्रलय पावे।
'उत्तमराम' वही हरि एक है, रामप्रकाश सन्त ताहि मनावे॥

(3)

चाह नही कछु धर्म रू अर्थ की कछु, चाह नहीं चित काम की सोई।
चाह नही स्वर्ग राज की कछु, चाह नहीं दुःख नाश की जोई॥
चाह यही चित एक ही जग में, प्राणिन के दुःख दूर हो कोई।
'उत्तमराम' वही हरि सामर्थ, रामप्रकाश की चाहना ओई॥

(4)

जाहि हरि हर देव मनावत, पूर्ण करे सब काम को सोई।
शैष गणेश धनेश ही ध्यावत, चाहत फल देवे तिन जोई॥
वाहि को नर सुर असुर ध्यावत, फल मनोच्छित देवत वोई।
'उत्तमराम' वही उर एक है, रामप्रकाश के शीश पे ओई॥

(5)

एक ही आत्म परमात्म निष्ठ है, एक ही इष्ट मनावत भाई।
त्रिगुण द्विगुण सगुण निर्गुण, एक वही सब का चित सांई॥
जाहि मनावत ध्यावत सब ही, एक अनेक को जीवन पाई।
'उत्तमराम' वही इष्ट निष्ठ है, रामप्रकाश प्रकाशित गाई॥

(6)

जो जहाँ ध्यावत सो वहाँ पावत, जाहि को ध्यावत वाहि को पावे।
जो जैसे ध्यावत सो वैसे पावत, जब कोई ध्यावत तबे मन लावे।
'उत्तमराम' वही इष्ट-निष्ठ है, रामप्रकाश चित-चेतन ध्यावे॥

(7)

स्वयं रामानन्द अग्रदास है, राम स्वयं हरिराम हमारे।
वही जीयाराम वही सुखराम है. अचलराम सोई निस्तारे॥
उत्तमराम वही परमेश्वर, इष्ट-निष्ठ ब्रह्म रूप उचारे।
'रामप्रकाश' नमो गुरु वन्दन, सतगुरु स्वयं सर्वेश्वर वारे॥

❖ ❖ ❖

## (4) आन उपासना अष्टक

(1)

पूजत भूत रु प्रेत रु खेतला, राणी भटियाणी भोमिया जी।
ध्यावत मूर्ति पत्थर पाधर, जीव हते कर सोमिया जी॥
खावत मांस रू पीवत है मद्य, भोपा भया होय लोभिया जी।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, ठग बाजी का होमिया जी॥

(2)

पूजत भैरव भैरवी साधन, तान्त्रिक साध के भयो अघोरी।
रहे शमशान करे जप दान रु, बाकला मान के दारू चढोरी॥
माता धूमावति और पीताम्बरी, इष्ट भगवती रूद्र मन्योरी।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह , ठग बाजी मत दूर तजोरी॥

(3)

पूजत देवल मन्दिर ध्यावत, देवी रु देवता विधि घनेरी।
होय के भोपा जु घूमत है घर, धूप खैंवाय करे दम्भ हेरी॥
भैरव पितर भूत को ध्यावत, प्रेत पिशाच की योनी बहेरी।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, ठग बाजी ठग लागत हेरी॥

(4)

डाकनी शंखनी कर्ण पिशाचनी, नाना देवी अरू योगिनी सेवे।
बावन भैरव चौंसठ योगिनी, सिद्ध चौरासी को फेरो पठेवे॥
सेय मशान जगावत जागरण, आवत भूत रू प्रेत भी केवे।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, ठग बाजी ठग लाग हरेवे॥

(5)

काली कंकाली को पूजत धूजत, देवी रू देवता नाना करे है।
भूत रू भैरव भोमिया पूजत, आन हि देवता आन धरे है।

भूत जगाय रहे शमशान में, दारू में गूँद के आटा जरे है।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, ठग बाजी जग जाल परे है॥

(6)

जाय मशान में वास बसावत, वेष विकराल बनावता है।
मानव खोपरि में लाय पीये जल, और शराब को पावता है॥
दारू में गूँदत आटा को लाय के, शव की आग सेकावता है।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, ठग बाजी भक्ष खावता है॥

(7)

नाना आडम्बर भेष नाना धर, रूप बहु कर ठग के खावे।
यज्ञ करे सु भण्डार रचे बहु, चन्दा करे बहु धन कमावे॥
करे अफण्ड रू पांखण्ड फैल रू, करे आडम्बर धौंस जमावे।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, जाल बिछाय के मौद मनावे॥

(8)

आन मनावत बात बनावत, घात लगावत पैठ जमावे।
माल कमावत मौद उपावत, गावत खावत चावत चावे॥
देव पुजावत पत्थर लावत, सिंदुर चढाय कहै मद लावे।
'रामप्रकाश' पुकार कहै यह, फैल करे पर लाभ न आवे।

❖ ❖ ❖

# (5) मानव जीवन अष्टक

(1)

कायरता तज करो पुरुषार्थ, धार सरलता मौद बढाई।
उत्तम संग करो परमार्थ, सतसंग सन्त सान्निध पाई।
नि:स्वाार्थ भाव तजो सब स्वार्थ, पर उपकार धरो चित माई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सदाई।।

(2)

गाय गीता अरू गायत्री भज, गंगा स्नान करो सब भाई।
वेद पुराण उपनिषद् गावत, भारत को इतिहास बताई।।
गंगा स्नान रू गायत्री जप, पाठ गीता कर गाय पुजाई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सदाई।।

(3)

ब्रह्मयज्ञ करो पितृदेव रू पूजन, अतिथि यज्ञ करो चित लाई।
भूत यज्ञ करो निशि वासर, गाय प्राणीजन पालना भाई।।
मानव जीवन के हित साधन, धर्म साधारण नित के ध्याई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सदाई।।

(4)

कृतज्ञ बनो रू कृतघ्नता तज, भज हरि नाम निःस्वार्थ भाई।
मानव धर्म को धारण के हित, कष्ट करो नित सहन सदाई॥
प्रातः उठो जप नाम हरि हर, जीवन सफल करो सब भाई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सदाई॥

(5)

करो विचार सदा अति उत्तम, त्याग करो पक्षपात बुराई।
शास्त्र अध्ययन गुरु मुख से कर, श्रवण मनन हेत लगाई॥
पालन धर्म को धारण के हित, कष्ट सहो तप तेज बढाई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सदाई।

(6)

शास्त्र विरूद्ध कहै कोई बात तो, त्याग करो गुरु मात पिताई।
पिता प्रहलाद रू माता भरत ने, मीरा दियो कुल ध्रुव छिटकाई॥
सन्त भये तज वंश कुटुम्ब रू, परिजन त्याग भये सुखदाई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सुनाई॥

(7)

दुर्लभ नर तन पूण्य प्रताप ते, दुर्लभ वृति जिज्ञास की भाई।
साधन दुर्लभ सतगुरु दुर्लभ, दुर्लभ साधना ज्ञान की आई॥

दुर्लभ सतसंग सन्त के दर्शन, दुर्लभ अध्यात्म निश्चय थाई।
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सुनाई॥

(8)

दुर्लभ अवतरण भारत भूमि में, दुर्लभ सात्विक भाव सदाई।
दुर्लभ मानव जीवन दुर्लभ, धर्म रु कर्म की मानवताई ॥
दुर्लभ सतगुरु भाव शरणागत, दुर्लभ आत्म ज्ञान कमाई॥
'रामप्रकाश' उचारत है सन्त, ग्रन्थ पुराण की साख सुनाई॥

❖ ❖ ❖

## (6) महन्ताई का अष्टक

(1)

सन्त गुरु से रूठनो राखत, भाखत झूँठ रु निन्दा सदाई।
नित करे उत्पात नया नव, शिष्य को बांध रखे नकटाई॥
अन्य सन्त की सेव न सतसंग, मना करे आदेश सुनाई।
महन्त बण्यो पर मेहनत ना करि, 'रामप्रकाश' भज्यो नहीं भाई॥

(2)

सन्त नीति वर त्याग करी सब, त्याग तिलक न कण्ठी है ताई।
गुरु परम्परा नेक न जानत, नीति को त्याग अनीति सम्भाई॥

व्यशन बीड़ी तमाखु में लाग के, राखत मूँछ है ऐण्ठ जमाई।
महन्त बण्यो पर महनत ना करि, 'रामप्रकाश' भज्यो नहीं भाई॥

(3)

आश्रम बान्ध के ठाठ लगाय के, मद छक्यो निरअक्षर लाई।
गुरु मर्याद न नीति को जानत, मनमते रह भेष लजाई॥
जात रू पान्त से चन्दा ही लायके, पूजत आन रु भूत जगाई।
होय पीठाधिश्वर त्याग कियो नहीं, 'रामप्रकाश' भज्यो नही भाई॥

(4)

ठाठ लगायके ईर्षा राखत, भैरव भूत जगावत जाई।
प्रेत क्रिया कर पितर पूजत, गुरु सम्पति की धूर उडाई॥
आपनी सम्पति मानत आश्रम, कुटुम्ब पालत ब्याज कमाई।
होय पीठाधिश्वर त्याग कियों नही, 'रामप्रकाश' भज्यो नही भाई॥

(5)

त्याग अनीति को नीति निभावत, औ पर उपकार को चित में लाई।
नहीं पक्षपात नहीं द्वन्द घात रू, ईर्षा द्वेष न राखत काई॥
सन्त गुरु जन सेव करे नित, राख पारम्परिक नीति निभाई।
मेहनत करके महन्त बण्यो सन्त, 'रामप्रकाश' गुरु भक्ति दृढाई॥

(6)

गुरु उपासना धर्म सनातन, धर्म-सम्प्रदाय मर्याद निभाई।
त्याग वैराग रु आश्रम धर्म सो, गुरु सम्पति को रक्षक भाई॥
धर्म समाज के काम करे नित, सेवत इष्ट रू नीति निभाई।
मेहनत करके महन्त बण्यो सन्त, 'रामप्रकाश' गुरु भक्ति दृढाई॥

(7)

मेहनत के बिन महन्त बण्यो शठ, त्याग वैराग नहीं चित मांई।
और पीठाधिश्वर होय के डोलत, गर्व भरयो उर में अधिकाई॥
शिष्य सहित परे नर्क कुण्ड में, गुरु बचाय सके नही पाई।
'रामप्रकाश' पुकारत प्रकट, ऐसे महन्त सो नर्क ले जाई॥

(8)

पर उपकार रू नीति निभावत, सतगुरु भक्त से प्रेम बढाई।
नाम जपे शुभ काम करे जग, धर्म सनातन नियम निभाई॥
जाग्रत ज्ञानि तपे जप साधन, भक्ति रू ज्ञान वैराग सधाई।
'रामप्रकाश' पुकारत प्रकट, ऐसे महन्त सो मुक्त पठाई॥

❖ ❖ ❖

## (7) मृत्यु भोज निवारण अष्टक

(1)

मात पिता घर से चलि जावत, वृद्ध जवान कोई जन हेरी।
घर गरीब के है कछु नाहिन, लाय उधार करे खर्च केरी॥
खेत रू सम्पति बेचत है घर, राखत रहन करे हठ एरी।
बन्द करो मृत्युभोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मान ले मेरी॥

(2)

बालक छोटे है ध्यान नहीं घर, नाहि लता पट ऋण घनेरी।
ताहि पे ऋण उधार करे शठ, पंच मिले बहु जन्म के बेरी॥
जाति को भोज सबे मिलि खावत, जीवत मार खाये सब खेरी।
बन्द करो मृत्युभोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मान लो मेरी॥

(3)

जीवत मार दीये सब बालक, उमर बन्धुआ होय के गेरी।
खावन पीवन धान न दूध है, विद्या को पढ सके नहीं टेरी॥
और नशे कर पीवत है वह, आयु पशु सम बीत चलेरी॥
बन्द करो मृत्यु भोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मान लो मेरी॥

(4)

ईज्जत जीवन जाय गरीब को, ऋण लिखाय लियो धन टेरी।
पंच मिले बहु बात बनावत, लायं उधार वो देवत ढेरी।।
हंस हंस खावत लाज न आवत, घर उजार दियो मिल बेरी।
बन्द करो मृत्युभोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मान लो मेरी।।

(5)

आयु आधीन करी सब परिजन, बन्धुआ जीवन खोय है फेरी।
कर्ज उतारण कारण भागत, जीवन जाय वृथा सब देरी।।
कष्ट के कारण दुःख में जीवत, पीढि गये ऋण नाहि उतेरी।
बन्द करो मृत्युभोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मानलो मेरी।।

(6)

औरन को सुख देखते देखते, होय हैरान हृदय हत हेरी।
खोसत खावत भागत छौरत, ईर्षा द्वेष में व्यशन घेरी।।
मार गये वह मात पिताजन, जीवित मर गये कुल के ढेरी।
बन्द करो मृत्यु भोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मान लो मेरी।।

(7)

पंच पंचायत मिल के बैठत, बात बढ़ाय कहै सब ठाली।
दीखत चोखो हो पूछते हो जग, करणो काम तो चोखी ही वाली।।

ला घृत खाण्ड रू वैषण आटा को, करे धम धूम चकाचक थाली।
बन्द करो मृत्युभोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु मान लो माली॥

(8)

बात लखो सत राह लखो सत, पूत सपुत रू कुल बचावो।
खूब बचाय जचाय के बालक, घर सधाय के बाल पढावो॥
नास करो मत वंश गरीब को, सहाय करो शुभ काम कमावो।
बन्द करो मृत्यु भोज ए सज्जन, 'रामप्रकाश' कछु रीति चलावो॥

*(दोहा)*

अष्टक मृत्युभोज को, पढो सुनो चितलाय।
रोको रोको हे जनों !, महा अनीति दुःखदाय ॥9 ॥

## (8) उपदेश अष्टक

(1)

सूरज चान्द प्रकाश करे नित, ताह को बिल न मांगत कोई।
श्वास रु वायु है बाहिर भीतर, ताहि को बिल ना भोगत जोई॥
जल को स्रोत है ताल नदी शुभ, जीवन रक्षक है जग सोई।
देवन को ऋण या विध ऊपर, 'रामप्रकाश' रह्यो सिर होई॥

(2)

मात-पिता घर भयो जनम रू, पालन पोषण कियो जिन प्यारो।
शिक्षित दीक्षित होय के जगमे, कुल व्यवहार कियो दक्ष सारो॥
मात पिता रू पितामह क्रमशः, सो पितृ ऋण नर पे भारो।
'रामप्रकाश' सपूत हो सेव हूँ, ऋण ते उऋण होय सुधारो॥

(3)

ऋषि मुनि तपस्या तप जीवन, कष्ट उठाय कियो उपकारो।
नियम धर्म बताय दिये सब, दैनिक जीवन कृत्य उचारो॥
वर्ण रू आश्रम मानव के हित, दिन चर्या कथ धर्म विचारो।
'रामप्रकाश' है ऋषि ऋण ऊपर, धर्म धरे चित होय उद्धारो॥

(4)

चूल्हा जलावत, धान को पीसत, झाड़ु बुहारि को करे सफाई।
ऊखल कुटत धान मसाले रु, जीव मरे बहु पाप बढाई॥
जल को राखत धोवत है पट, बर्तन तन करे चतुराई।
'रामप्रकाश' हिंसा पंच ठोर हूँ, जीव हते नित है घर माई॥

(5)

नित उठो ब्रह्म मुहूर्त्त में हरि, नाम जपों 'ब्रह्म यज्ञ' कहावे।
शौच स्नान करो इष्ट पुजन, दीपक पूजन 'देवयज्ञ' भावे॥

मात पिता कर गुरु सन्त पूजन, नमन करो 'पितृयज्ञ' सुहावे।
कीड़ी कबुतर गाय को भोजन, 'भूतयज्ञ' कर आनन्द पावे॥

(6)

पूज अभ्यागत अतिथि भोजन, आसन जल की सेवा सुधारो।
नर यज्ञ अतिथि यज्ञ है, प्राणी मात्र की सेवा मन धारो॥
ब्रह्मयज्ञ रू देवयज्ञ कर, भूत यज्ञ रु पितृयज्ञ प्यारो।
'रामप्रकाश' करो नित यज्ञ पंच, गृहस्थ जीवन को होय उधारो॥

(7)

पंच यज्ञ करो त्रय ऋण तरो, उर धर्म धरो चित प्रेम लगाई।
धैर्य क्षमा शम दम रु शौच ये, बुद्धि में सत्य को धरले भाई॥
विद्या अध्यातम हो अक्रोध सु, तन मन वाणी को शुद्धि संभाई।
'रामप्रकाश' ये मानव धर्म है, पावन जीवन हेतु सुहाई॥

(8)

मानव जीवन पावन हो वर, लोक परलोक सदा सुखदाई।
धर्म धरो उर कर्म करो शुभ, व्यशन दोष तजो दुःख राई॥
नशा समूल को छोड़ के होकर, साहस कर पुरुषार्थ धाई।
'रामप्रकाश' ये मानव को धर्म, धार पुरुषोत्तम लक्षण भाई॥

(दोहा)

मानव धर्म अष्ठक यही, धरे उर सुज्ञान।
'रामप्रकाश' पालन करे, जीवन हो कल्यान ।।9 ।।

❖ ❖ ❖

## (9) चाणक अष्टक

(1)

मात पिता सतगुरु से बेमुख, सतसंग करे तन भेष बनाई।
धर्म न कर्म सन्ध्या नहीं वन्दन, गुरु पीढि से बेमुख भाई।।
गुरु विहीन परम्परा हीन हो, आश्रम नाम को रहयो लजाई।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' यह साच सुनाई।।

(2)

भेष न पन्थ को मात न तात को, जात जमात को नाहि सुहावे।
बाहिर भेष आडम्बर ठान के, पाखण्ड रूप में लोक रिझावे।।
गुरु रू सन्त से होड करे शठ, ईर्षा लोभ रु मोह कमावे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' यह साख सुनावे।।

(3)

गुरु पन्थ भेष सदा ही उपावत, नित नये चित माहि लगावे।
आसन योग रू प्राण चढावत, बैठ एकान्त में नाटक ठावे।।

जटा बढाय के मूँछ न राखत, डाढी कटाय के रूप बनावे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' कहै साच सुनावे॥

(4)

साधु समाज से द्रोह बढ़ावत, गृहस्थ भेष से प्रेम बढावे।
गुरु मर्याद की रीति तजी सब, वैर ठन्यो गुरु द्वार ते भावे॥
अक्षर ज्ञान पढ्यो बहु मूरख, ज्ञान व्यवहार को मूल न आवे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' कह साच सुनावे॥

(5)

बात पढी उर घात घड़ी बहु, जाति को पक्ष सोई मन भावे।
धर्म तज्यो मन मानव को सब़, कर्म तज्यो सब साधु को गावे॥
साधु असाधु भयो मन मूरख, गर्व भरयो उर माहि न मावे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' कह साच सुनावे॥

(6)

साधु के कर्म को त्याग दिये सब, करे व्यवसाय रू नौकरी भावे।
लोभ लग्यो उर मोह भस्यो कुल, साधु के भेष को मूढ लजावे॥
गुरु दरबार मर्याद तजी सब, घर को रह्यो ना घाट को चावे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' यह साच सुनावे॥

(7)

बिना मर्याद करे सतसंगत, गुरु करो कह भक्ति द्रढावे।
और प्रमोद करे शठ मूरख, आप वही मन नेक न लावे॥
पर उपदेश कहै कथ मूरख, आचरहि सो नर कोउक ठावे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' कहै साच सुनावे॥

(8)

खेती करे कोऊ ब्याज कमावत, लाय चन्दा मन मोद बढावे।
और व्यवसाय करे व्यापार जु, सन्त बन्यो सब भेंट चढावे॥
गल में भगवा चादर राखत, बाबो जी बाबो रू भाजी ही खावे।
सन्त के भेष शैतान ही घूमत, 'रामप्रकाश' यह साच सुनावे॥

*(दोहा)*

इति अष्ठक जो पढे, करे परीक्षा जान।
तज पाखण्ड की चाल को, समझे साधु सुजान॥9॥

❖ ❖ ❖

## (10) दिखावा खण्डन अष्टक

(1)

कथा करे बहु लोक रिझावत, कथा व्यवसाय लायो अपनाई।
ब्राह्मण को कर्म सन्त लिये अरु, सन्त को कर्म लीयो ब्राह्मण भाई॥

गाय बजाय के नाच नचाय के, मर्मको भ्रम बढावत जाई।
पर उपदेश करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धस्यो चित नाई॥

(2)

यन्तर मन्तर तन्तर राखत, भ्रम फंसाय के लालच लाई।
ईश्वर धर्म को लोप कियो अरू, जीव को धर्म लिये अपनाई॥
यन्त्र तन्त्र साधके तान्त्रिक, मन्त्र को साध भयो सिद्ध ताई।
पर उपदेश करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धस्यो चित नाई॥

(3)

कथा व्यवसाय में मोल बिक्यो नित, धन कमाय भयो धनवानी।
व्याकरण पढ भयो है नोकर, पैसा कमाय बढ़ावत मानी।
साधु को काम सो है उपकार सु, निःस्वार्थ भाव करो शुभ बानी।
पर उपदेश करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धस्यो चित हानी॥

(4)

राग उचार करे बहू ऊँची सु, गाय बजाय के लोक रिझावे।
सीखत गावत नाचत भाव से, और नचावत रागिन गावे॥
विद्या अध्यात्म पढ्यो नहीं गुरुमुख, ऊपरि सीख अड़े रु अड़ावे।
पर उपदेश करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धस्यो चित पावे॥

(5)

सीखत है पद बीस पचीस रू, संत बन्यो मन है अभिमानी।
मौसर विवाह में जावत पावत, गावत भेंट लेवे मन मानी।।
मृतक भोजन बारह दिनों पर, खावत लाज न आवत जानी।
पर उपदेश करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धर्‍यो नहीं कानी।।

(6)

नशे करे चित चाह रू चिलम, बीड़ी तमाखु को चाह से पीवे।
अवसर पाय के पीवत है मद, मांस भखे मन लाज न पीवे।।
पाय शराब नशे अच मादक, मोद करे सन्त होय के जीवे।
पर उपदेश करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धर्‍यो नहीं हीवे।।

(7)

सन्ध्या समय में भ्रमण जावत, दीप न धूप न आरती गावे।
धूणा लगाय के डोरा बनाय के, धूप सजाय विभूति लगावे।।
देव मनावत आन को ध्यावत, राखी बनाय के हाथ हलावे।
पर उपदेश करे नित चाहत, 'रामप्रकाश' धर्‍यो नहीं भावे।।

(8)

ब्राह्मण होय अभिमान करे मन, होय के सन्त करे मनमानी।
जाति रू पन्थ की आन को राखत, इष्ट विमुख भयो अभिमानी।।

लोभ रू मोह में डूब रह्यो भृष्ट, तजी मर्याद भयो नष्ट जानी।
पर उपदशे करे हित चाहत, 'रामप्रकाश' धर्‍यो नहीं कानी॥

(दोहा)

यह अष्ठक मर्याद को, पाखण्ड दिखावा हान।
पढे सुने मन चित धरे, पारख पड़े पिछान॥9॥

❖ ❖ ❖

## (11) मानव धर्म अष्टक

(1)

बालिका बालक विद्या पढाव हूँ, शील को धर्म सिखाय उदारो।
आचरण शील आचार विचार हूँ, ओ सदाचार में जीवन ढारो॥
मात पिता गुरु वृद्ध जनों पद, शीश धरो नित ऊठ सवारो।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को निस्तारो॥

(2)

मात पिता जन प्राण तजे कोई, द्वादश दिन का कारण सारो।
मृत्यु को भोज करो मत सज्जन, खावन जावन छोड़ दे प्यारो॥
व्यर्थ खर्च तजो सब कुपथ, पाठ गीता कर मोक्ष सिधारो।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को निस्तारो॥

(3)

बाल विवाह तजो सब सोचके, बालक बालिका आयु विचारो।
आयु रू अनुभव हीन यही तन, होय निर्बल तन आयु को हारो॥
कायर काम कपूत तजो कर्म, उद्यम हीन होवे तन बारो।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को निस्तारो॥

(4)

व्यशन दोष नशे तज मानव, जीवन माहि पुरुषार्थ धारो।
बीड़ी तमाखु शराब खराब है, भांग अफीम लेवो मति प्यारो॥
चोरी यारी तजो झूठ जग को, निन्दा रू ईर्षा मत्सर टारो।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को निस्तारो॥

(5)

पातक पांच होवे घर भीतर, नित्य विचार करो उर सारो।
पांचहूँ यज्ञ को पाल हूँ नित को, ब्रह्म पितृ नर देव भूतारो॥
धर्म के अंग धरो उर अन्दर, बाल पढाय के योग्य सुधारो।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को निस्तारो॥

(6)

नीति को ग्रन्थ पढो मर्याद से, नीति को पालन कीजिय सारो।
ब्रह्म विद्या पढ सतगुरु के मुख, आतमज्ञान को होय उजारो।

दोष दशों तज व्यशन सप्त रू, नशे तजो सब दूषण हारो।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को निस्तारो ।।

(7)

सन्तन को संग धार हृदय बिच, सत संग सार सुधारस पीजे।
तजो कुसंग जु ताश जूआ संग, असत त्याग रहो नित धीजे ।।
गुरु भक्ति मर्याद को पालन,हरि नाम जपो सुख पावन लीजे।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन को शुभ कीजे ।।

(8)

गुरु बेमुख को संग त्याग दे भारत, ताहि के दर्शन ते पुण्य नासे।
कृतघ्नी को नाम जो लेवत, पाप बढ़े पुण्य नास हो पासे ।।
नाम लजावत नाम के सुनत, चिन्तन ते चित अनीत ही भासे।
'रामप्रकाश' यह नीति उचारत, मानव जीवन के हित आसे ।।

*(दोहा)*

गुरु मुखि अष्ठक नित पढे, धरे हृदय में आन।
'रामप्रकाश' पालन करे, जीवन होय कल्यान ।।9 ।।

✤✤✤

# (12) मानवता अष्टक

*(इन्दव छन्द)*

(1)

उत्तम कर्म योनी यह मानव, चाह करे वह पावत प्रानी।
कर्म रू धर्म की परम पुरुषार्थ, अर्थ रू काम इच्छा वत जानी॥
मुक्ति जो चार पावे पद पूरण, जीवन्मुक्ति विदेह को मानी।
'रामप्रकाश' नर देह सुहावन, परम पुरुषोत्तम आतम ज्ञानी॥

(2)

नीति रु रीति को पावत है नर, लोक परलोक सुहावत आनी।
और योनी सब भोगत भोग को, देव रू दानव वृक्ष परमानी॥
पशु पक्षी भव लाख चौरासी जो, भोग योनी कथ गावत जानी।
'रामप्रकाश' नर देह सुहावन, परम पुरुषोत्तम आतम ज्ञानी॥

(3)

कर्मयोनी नर देह सुहावत, और सभी भव भोगत प्रानी।
भोग योनी भव सागर भोगत, आवत जावत जीव समानी॥
जन्म रू मरण पावे सब आवत, कर्म कमावत भोगत जानी।
'रामप्रकाश' नर देह सुहावत, परम पुरुषोत्तम आतम ज्ञानी॥

(4)

देव चहे नर देह धरूँ अब, सतसंग भक्ति मिले सुखदानी।
आयु बढावन लोक बसावन, ध्रुव समान हो अटल आनी॥
आतम ज्ञान उदय भल होवत, पावत मोक्ष पदार्थ मानी।
'रामप्रकाश' नर देह सुहावन, परम पुरुषार्थ आतम ज्ञानी॥

(5)

मानव देह को पाय के भूलत, इच्छित जप तप तीर्थ साधे।
यज्ञ करे बहु दान धरे धन, स्वर्ग अमरपति कठिन लाधे॥
मूर्ख कर्म योनी भल पायके, भोग चहे गन भ्रम उपाधे।
'रामप्रकाश' नर देह गमावत, भोगादित्य मन दुर्लभ आधे॥

(6)

भूमि पे आवत पूण्य इति पर, देव सभी तज स्वर्ग आवे।
जन्म धरे वह आय धरातल, पाय विचार वह पुण्य कमावे॥
मोह भ्रमे भव भूल भोगातन, सो रह जीव रसातल जावे।
'रामप्रकाश' नर देह सधावत, ज्ञान प्रताप ते मुक्त समावे॥

(7)

कोईक जीव स्वर्ग से आवत, देह धरे नर नाक सिधावे।
कोईक जीव सो नाक से आयके, देह धरे नर फेर ही आवे।

कोईक जीव सो आय स्वर्ग से, फेर वही भव नर्क ही जावे ॥
'रामप्रकाश' हो देव पतित सो, संगत पाय के वो फल पावे ॥

(8)

कोईक जीव धरा तज आवत, देह तजे नर नरक ही जावे।
कोईक देह तजे नर आवत, फेर धरे नर देह सुहावे ॥
कोईक नर तन त्याग के आवत, सो वह पुण्य से स्वर्ग ही गावे।
'रामप्रकाश' हो मानव मानव,, संगत पाय के वो फल पावे ॥

(9)

कोईक जीव सो नर्क से आवत, फेर वही मग नर्क ही जावे।
कोईक नारकीय भोग के आवत, फेर वह आय के नर तन ध्यावे ॥
कोईक नर्क से आवत है भल, होंय नराधम भोगत जावे।
'रामप्रकाश' हो मानव दानव, संगत पाय वही फल पावे ॥9 ॥

❖ ❖ ❖

## (13) गोकुल अष्टक

(1)

स्थूल रु सूक्ष्म कारण देह को, जाग्रत स्वप्न सुषोप्ति वारो।
तीन अवस्था रु देश रु काल को, वस्तु परिच्छेद सुहावन कारो ॥

प्राण मनो विज्ञान मिले त्रय, अन्न मय आनन्द कोश उजारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

(2)

कारण करण रु धारण टारण, देह विदेह विडारण वारो।
व्यष्ठि समष्टी में अनव्य अव्यय, सत चित आनन्द परम उजारो॥
वही कुटस्थ रू है चिदाभासजु, ब्रह्म स्वरूप अनुप पसारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

(3)

आदि रू अन्त के मध्य विराजत, आप अनादि सो एक अपारो।
नभ ते सूक्ष्म तेज प्रकाशक, वायु ते वेग है धावक प्यारो॥
जल ते कोमल अनन्त गुणाकर, वही प्रसारक कारक सारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

(4)

देह रु इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण, चित ही आप चेतावत सारो।
उत्पति स्थिति प्रलय पदार्थ, सोई अयथार्थ-यर्थाथ धारो॥
दृश्य सभी यह नाम रू रूप सों, है व्यतिरेक में अन्वय भारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

(5)

सुख रू दुःख में जन्म रू मरण जु, हानि रू लाभ को द्वन्द असारो।
है निर्द्वन्द रू निष्प्रह आनन्द, अचल अखण्ड सो उजियारो॥

एक असीम अनन्त अगोचर, दृश्य अदृश्य ते अद्रष्ट अधारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जानन हारो॥

(6)

माया अविद्या की छाया ते दूर है, जन्म रु मरण से आप है न्यारो।
साक्षी असाक्षी अपेक्षा उपक्षेति, द्वैत अद्वैत को मूल उखारो॥
वाच्य रू लक्ष्य की नहीं वाचकता, गूँगे के गुड़ को आप उचारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

(7)

पक्ष अपक्ष न दक्ष अदक्ष न, लक्ष अलक्ष न लाल न कारो।
द्वैत अद्वैत न हार न जीत है, वाच्य अवाच्य न लक्ष्य लखारो॥
गोकुल गाँव को वासी है आप ही, जानत मानत अधिष्ठान उजारो।
'उत्तमरामप्रकाश' है चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

(8)

जहित अजहति रू फल-वृति मय, व्याप्ति अव्याप्ति को भेद निवारो।
वही यथार्थ नहीं अयथार्थ, क्रिया अक्रिय न कर्म विचारो।
खण्ड-अखण्ड विखण्ड में आपही, नाम बेनाम अनाम उचारो।
'उत्तमरामप्रकाश' सो चेतन, गोकुल गाँव को जाननहारो॥

*(दोहा छन्द)*

जड़-मिथ्या माया सभी, गोकुल गांव शरीर।
द्रष्टा कुटस्थ चिदाभास में, व्यापक साक्षी मीर॥9॥

सच्चिदानन्द स्वरूप नित, ब्रह्म ही जाननहार।
ता भिन्न सब ही द्वैत है, ब्रह्मज्ञानी चित धार ॥10॥

❖ ❖ ❖

## (14) मुक्ति अष्टक

(11)

मुक्ति की चाह करे नर निर्बल, सामर्थ हीन बिना गुरु वारे।
मांगन हार भिखारी बने वह, मांगत मुक्ति जा मन्दिर द्वारे॥
सतगुरु समर्थ आप मिले तब, मुक्ति की चाह रहे नही लारे।
'उत्तमराम प्रकाश' स्वयं चेतन, मुक्ति की चाहना नाहि हमारे॥

(12)

मुक्ति के हेतु पुरी सप्त जावत, धाम चारों जा अर्ज पुकारे।
मूर्ख नर भ्रमे भव भीतर, मुक्ति के हेतु मरे फिर जारे॥
मुक्त स्वरूप है आप सदावत, मुक्त के नाम क्यों रोवत प्यारे।
'उत्तमराम प्रकाश' को चाहत, मुक्ति स्वयं पद आय पखारे॥

(13)

मोक्ष रू मुक्ति की चाह नही कछु, नही निर्वाण निस्तार हमारे।
मुक्ति की खोज करे नर भ्रम में, काशी हरिद्वार फिरे जग मारे॥
तीर्थ व्रत करे तप संयम, जपे बहु जाप वो देव जुहारे।
मुक्ति की चाह में डोलत है जन, 'रामप्रकाश' लखे बिन सारे॥

(14)

वेद को भेद रू शास्त्रन के मत, मुक्ति की खोज में पाठ उचारे।
मुक्ति के हित सगुण पूजत, हरि हर सूर्य रु शक्ति अपारे॥
नाना ही मन्दिर तीर्थ अन्दर, मुक्ति के हेतु में भटक भुलारे।
मुक्ति की चाह में डोलत है जन, 'रामप्रकाश' लखे बिन प्यारे॥

(15)

मुक्ति की चाह करूँ नहीं कबहूँ, चाह करी नहीं जीवन सारे।
मुक्ति की चाह रही नहीं जीवन, सतगुरु शरण में आयु विहारे॥
मुक्ति के रूप में आप को जानके, संशय हीन भयो भ्रम हारे।
मुक्ति की चाह करे स्वयं मुक्ति हि, 'रामप्रकाश वो सन्त के द्वारे॥

(16)

सन्त के चरण में पाँव पलोटत, मुक्ति दासी नित माग बुहारे।
अन्तर्नाद के अन्तर्भाव में, अन्तर्मन को मुक्ति निहारे॥
अन्तर्साधन शम दम आसन, विवेक वैराग अभ्यास विचारे।
गुरु कृपा पद 'रामप्रकाश' को, पाय के मुक्ति होवे धनकारे॥

(17)

मुक्ति की चाह होवे जन जाहि को, आय गहो गुरु चरण हमारे।
वाणी विचार धरो उर अन्दर, प्रणव ज्ञान गुरु गम धारे॥
ऋषि मुनि संग गुरु पद वन्दन, धार हृदय विश्वास विचारे।
'रामप्रकाश' के पीछे ही धावत, जाहि मुक्ति कहि लोक पुकारे॥

(18)

काम रु क्रोध विकार मिटे उर, ईर्षा रु द्वेष को द्वैत विडारे।
मत्सर मोह अज्ञान मिटे तम, भास्कर ज्ञान उदय उर प्यारे॥
गुरु पद वन्दन सन्तन के संग, निर्मल स्वभाव के जीवन धारे।
'रामप्रकाश' मुक्त स्वरूप है, गोकुल गाँव को ब्रह्म विचारे॥8॥

❖ ❖ ❖
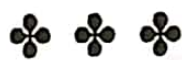
*भजन (1) राग आशावरी पद*

साधो भाई ! वह नर नर्क सिधावे।
दश विध पाप अनन्त अघ पालक, यम का दण्ड भुगतावे॥टेर॥
हिंसा चोरी निष्ठुर भाषण, अन्यथा काम कमावे।
चुगल खोरी अनृत अविनय, नास्तिकता में अलुझावे॥1॥
हृदय विदारक भेद व्यापारी, अवैध आचरण पावे।
निरीश्वरवादी शास्त्र विरोधी, अतप अक्षमा लावे॥2॥
दिवाशयन सुरापान धूर्तता, व्यर्थ भ्रमण भरमावे।
अनध्यायी ईश्वर विमुखता, अवाच्य वचन विलमावे॥3॥
आज्ञा उल्लंघन मात-पिता की, व्यभिचारी आन जपावे।
स्त्रीवध गर्भपात वर्णसंकरी, अपमृत्यु घात लगावे॥4॥
गुरु बेमुख सन्तन का निन्दक, शास्त्र-कलंक उपावे।
'रामप्रकाश' वह अघ भण्डारी, सहजे यम घर जावे॥5॥

## भजन (2) राग आशावरी पद

साधो भाई ! वह जन स्वर्ग सिद्धावे।
सर्व सरलता ज्ञान योग में, अपना जीवन बितावे।।टेर।।
शान्ति आर्जव भक्ति तप संयमी, शौच अकिंचनता लावे।
धैर्य क्षमा शम दम साधक, दया दान चित ध्यावे।।1।।
ज्ञान वैराग्य भक्ति ऐश्वर्य, विद्या-विज्ञान उपावे।
अधिष्ठान तत्व का चिन्तक, स्वधर्म निष्ठ कहावे।।2।।
आस्तिक भाव शाश्वत धर्मी, साधु धर्म निभावे।
प्रणव शक्ति नाद कला में, द्वन्द का भाव मिटावे।।3।।
कर्म भ्रम संशय मत छेदन, अविद्या मूल गमावे।
सन्त सेवा सतसंग गुणधारे, सात्विक भक्ति कमावे।।4।।
'उत्तमराम' चित अभरा भरता, सकामी नाक पथ पावे।
'रामप्रकाश' निष्कामी ज्ञानी, जीवन्मुक्त समावे।।5।।

❖ ❖ ❖

# उत्तम साहित्य-प्रकाशन सूची

- आचार्य सुबोध चरितामृत (सचित्र) सम्प्रदाय शोधग्रन्थ
- सन्तदास अनुभव विलास (गुरु स्मृति पाठ)
- हरिसागर (समस्त ज्ञानों का भण्डार) टीका सहित एवं मूल
- वाणी प्रकाश (छः महात्माओं की अनुभव वाणी)
- अचलराम भजन प्रकाश (तीन साईज में)
- सुखराम दर्पण अर्थात् उत्तम वाणी प्रकाश (टीका सहित)
- आध्यात्मिक सन्त वाणी शब्द कोष (परिशिष्ट भाग)
- हिन्दू धर्म रहस्य
- नासकेत गीता (नचिकेता का सम्पूर्ण जीवन वृत्तान्त)
- भारत का व्यास (ऐतिहासिक रहस्य)
- उत्तमराम भजन प्रकाश
- अवधूत ज्ञान चिन्तामणि
- भारतीय समाज दर्शन
- विश्वकर्मा कला दर्शन
- नशा खण्डन दर्पण
- रामरक्षा अनुष्ठान संग्रह
- पिङ्गल रहस्य (छन्द विवेचन)
- ज्योतिष दोहावलि (मूल/टीका सहित)
- रामप्रकाश शब्दावली (सचित्र)
- उत्तमराम अनुभव प्रकाश
- रामप्रकाश शब्द सुधाकर (सचित्र) दो भाग
- गूढ़ार्थ भजन मञ्जरी

- ❖ अपूर्व एक लाख वर्षीय कैलेण्डर
- ❖ रत्नमाल चिन्तामणि (प्रथम भाग)
- ❖ उत्तम बाल योग रत्नावलि (तीन भाग)
- ❖ सन्ध्या विज्ञान
- ❖ सुगम चिकित्सा - प्रथम भाग
- ❖ सुगम चिकित्सा - द्वितीय भाग
- ❖ सुगम उपचार दर्शन (देवीदान औषधि कल्पतरु)
- ❖ तिलक प्रबोध दर्शन (तीन भाग)
- ❖ उत्तमरामप्रकाश भजन प्रदीपिका
- ❖ स्वाध्याय वेदान्त दर्शन
- ❖ वेदान्त भूषण वैराग्य दर्शन
- ❖ दैनिक चिन्तन दैनन्दिनी
- ❖ रामप्रकाश भजन प्रभाकर
- ❖ कामधेनु (गाय का महात्म्य)
- ❖ सर्वदर्शन वाद कोश
- ❖ अचलराम ग्रन्थावली (1-2-3 भाग)
- ❖ नवलाराम भजन विलास
- ❖ नित्य पाठ - नव स्तोत्र
- ❖ रामदेव ब्रह्म पुराण
- ❖ रामदेव गप्प दर्शन
- ❖ अत्येष्टि संस्कार (शव यात्रा)
- ❖ उमाराम अनुभव प्रकाश
- ❖ सत्यवादी वीर तेजपाल
- ❖ गोरख बोध वाणी संग्रह

**उतम प्रकाशन का उत्तम साहित्य मिलने के स्थान—**

1. **उत्तम आश्रम (आचार्य पीठ)**
   कागामार्ग ,नागौरी गेट, जोधपुर-342006 (राज.)
2. **रामप्रकाश आश्रम**
   रामधोरा, पो.गठीलासर वाया नागौर (राजस्थान)
3. **उत्तम आश्रम सतसंग भवन**
   विष्णु फैक्ट्री के सामने, गोविन्दसिंह कॉलोनी,
   श्रीविजयनगर, जिला श्रीगंगानगर (राज.)
4. **उत्तम आश्रम सतसंग भवन**
   रायसिंहनगर रोड, 87 जी.बी., अनूपगढ़ (श्री गंगानगर)
5. **रत्नेश्वर पुस्तक भण्डार**
   रत्नबिहारी पार्क के सामने, स्टेशन रोड, बीकानेर (राज.)
6. **विनायक बुकसेलर**
   पुरानी मण्डी, अजमेर (राज.)
7. **सरस्वती पुस्तक भण्डार**
   सैण्ट्रल बैंक के पीछे, पुरानी मण्डी, अजमेर (राज.)
8. **बृजलाल पटवारी**, गांव-पोस्ट ताखरांवाली,
   वाया गोलूवाला, श्री गंगानगर (राज.)
9. **शान्ति भवन**, रेल्वे स्टेशन के सामने,
   उत्तर दिशा, राजलदेसर, जिला चूरू (राज.)

## त्त्वदर्शी स्वामी श्री रामप्रकाशाचार्य जी महाराज 'अच्युत'
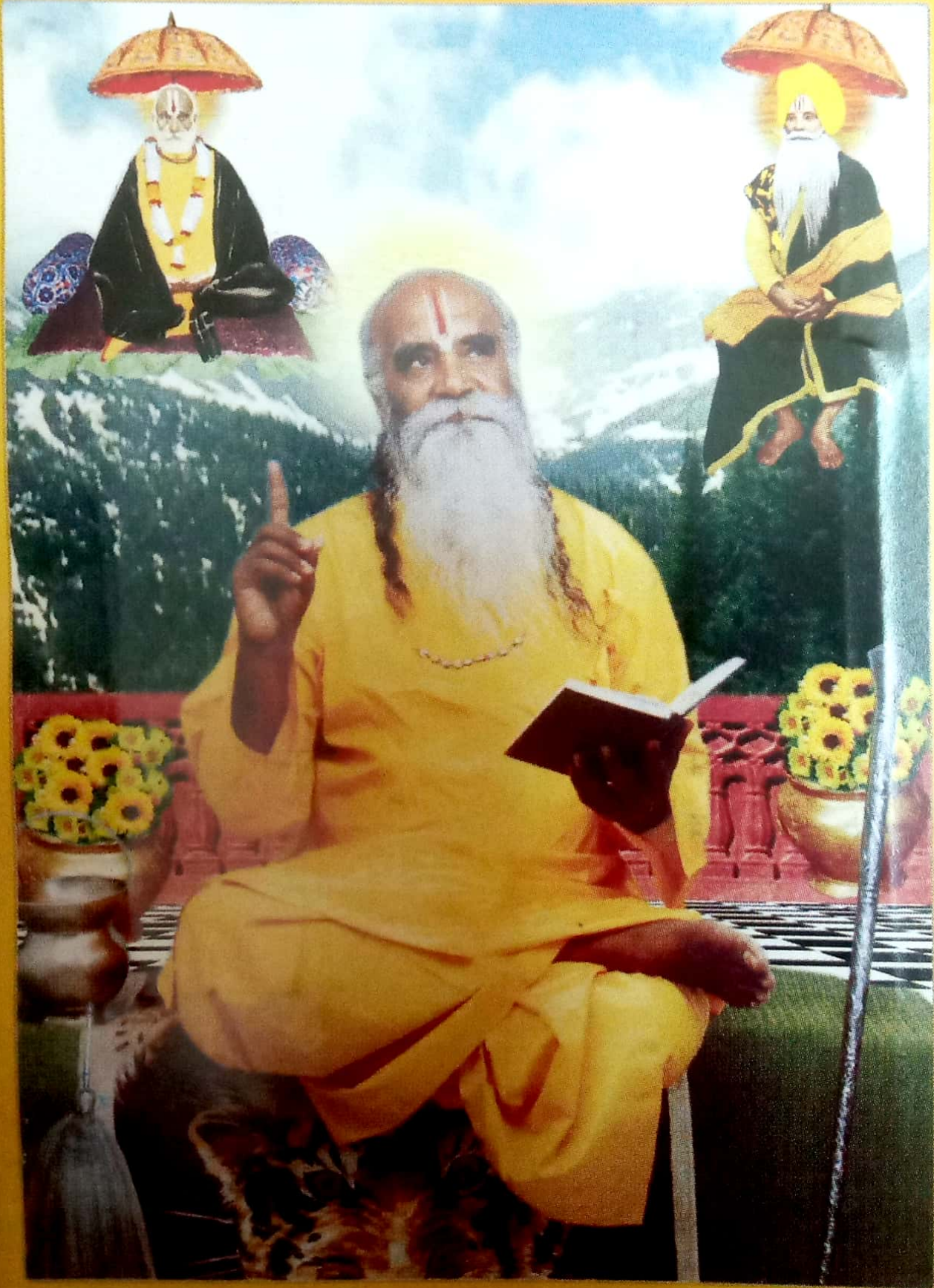
श्री श्री 108 श्री स्वामी उत्तमरामजी महाराज की शिष्या

साध्वी अन्नपूर्णाबाईजी (अंजना) वैष्णव